TIRUMALA TIRUPATI DEVASTHANAMS
सप्तगिरि
तिरुमल-तिरुपति देवस्थान की मास-पत्रिका

इस प्रारम्भोत्सव के सिलसिले में श्री लालगुडि जयरामन, वाइलेन के प्रख्यात कलाकार को आस्थान विद्वान पद से सम्मानित करते हुए माननीय मंत्री महोदय ।

चित्र में भूतपूर्व देवादायशाखा मंत्री श्री वीरमाचनेनि वेंकटनारायण, कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी. वी आर. के प्रसाद, आई ए. एस, न्यासमण्डल के अध्यक्ष डा० एन रमेशन, आई. ए. एस. तथा उपकार्यनिर्वहणाधिकारी श्री एन. नरसिंहाराव, बी.ए. एलएल.एम को देख सकते हैं । ↓

तिरुपति में दिनांक २०-४-७९ को ति.ति देवस्थान के नूतन कार्यालय भवन को आन्ध्र प्रदेश के भूतपूर्व देवादायशाखामंत्री, श्री वीरमाचनेनी वेंकटनारायण से उद्घाटन किया गया ।

इस शुभ सदर्भ में श्री नेदुनूरि कृष्णमूर्ति, प्रख्यात संगीत गायक को आस्थान विद्वान पद से सम्मानित करते हुए मंत्री महोदय । ↓
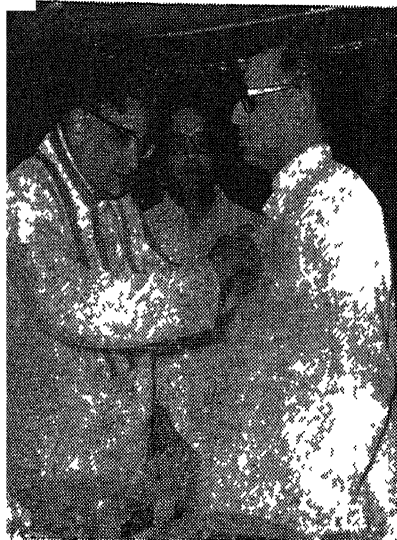
देवस्थान के नूतन कार्यालय भवन में 'टेलिफोन एक्चेन्ज' को उद्घाटन करते हुए भूतपूर्व देवादायशाखा मंत्री श्री वीरमाचनेनि वेंकटनारायण महोदय ।

श्रियै नमः

श्री श्रीनिवास परब्रह्मणे नमः

शुभ्रोर्ध्वपुण्ड्रविलसन्मकुटः सुनासः
श्रीशङ्खचक्रयुगलान्वितपाणिपद्मः ।

पद्मालयाश्रितमनोहरदिव्यवक्षाः
देदीप्यते निगमशैलशिरःप्रदीपः ॥

सप्तगिरि के पाठकों को हमारे शुभाभिनंदन। खुशी की बात है कि नौ वर्ष को पूरा करके, इस संचिका से दसवीं वर्ष मे कदम रखा है। यह सब भगवान बालाजी की शुभासीस तथा आप सभी लोगों की मदद से सम्भव हुआ है। इस शुभ सदर्भ में हम अपने लेखको, कवियों, चित्रकारों, प्रतिनिधियों (Agents), पुस्तक विक्रय-शालाधिकारियों, देवस्थान के अधिकारियों तथा श्रेयोभिलाषियों को कृतज्ञता प्रकट कर रहे हैं। आगे भी आप सभी से प्रोत्साहन देने की अनुरोध कर रहे हैं।

आज तक हमारी इस पत्रिका की बिक्री संख्या १९,००० हैं। परन्तु हमारे अधिकारियों का आशय है कि इसे और भी बढायें। क्लिष्ट तथा निगूढ धार्मिक व आध्यात्मिक बातों को लोगों को समझाने का मुख्य उद्देश्य है। ग्राम-ग्राम रहनेवाले लोगों तक पहुँचाने का संकल्प है। इसलिए इस साल सभी भाषाओं में मिलाकर लगभग ५०,००० का लक्ष्य रख गया है। इस लक्ष्य कों पूरा करने के लिए देवस्थान भी कई प्रकार कोशिश कर रहा है। और आप लोगों की मदद तो चाहिए अवश्य ही।

इस संचिका से नूतन वर्ष की भेंट के रूप में सप्तगिरि के लेखक, छाया-चित्रकार व चित्रकारों को पारितोषिक दिया जा रहा है। अतः पत्रिका के नाम बढाने व आप के नाम बढाने के लेख व चित्र भेजें।

अभी तक सप्तगिरि के विक्रेता जो नाममात्र कमीशन लेकर निस्वार्थ सेवा कर रहे हैं, उनकी सेवा को अधिकारियों ने पहचान लिया। इसलिए उन्हें प्रोत्साहन देने के लिए साल भर में हर एक भाषा में हर महीने ५०० प्रतियों से ज्यादा बेचनेवाले एजेन्ट को सेवाचिह्न के रूप में एक रजत पतक (Silver Dollar) देने का निर्णय लिया गया।

आगे से हम ग्रंथ-समीक्षा नामक शीर्षक को भी शुरू कर रहे हैं। इसके लिए लेखक को अपने ग्रंथ या पुस्तक की दो प्रतियों को भेजना पडेगा।

और एक मुख्य बात यह है कि सप्तगिरि ति. ति. देवस्थान के कार्यक्रमों के प्रचार के अलावा अन्य मंदिरों से भी सम्पर्क रखना चाहती है। ऐसे स्थानीय विशेष कार्यक्रमो के लिए एक पृष्ठ को अलग रखा गया है। अतः कृपया आप धार्मिक व आध्यात्मिक कार्यक्रमों से सम्बन्धित समाचार हमें भेजें।

आगे भी इससे बढकर और ज्यादा मदद की आकांक्षा करते हुए, आप सभी लोगों को हमारी शुभकामनाएँ।

॥ सधन्यवाद ॥

सम्पादक

सप्तगिरि

जून १९७९ वर्ष १० अंक १

एक प्रति .... रु. ०–५०

वार्षिक चंदा .... रु. ६–००

गौरव संपादक
श्री पी. वी आर. के. प्रसाद
आइ. ए. यस्,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति. ति. दे. तिरुपति.
दूरवाणी २३२२

संपादक, प्रकाशक
के. सुब्बाराव, एम. ए.,
तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति
दूरवाणी २२५४.

मुद्रक
एम्. विजयकुमाररेड्डी,
मनेजर, टी. टी. डी. प्रेस्, तिरुपति.
दूरवाणी २३४०.

सकल देवता पूजा विधि	श्री सी. रामय्या	५
प्रिय प्रवास में राधा का विरह-वर्णन	श्री अर्जुन शरण प्रसाद	७
हिन्दी काव्य में भ्रमरगीत - सगुण भक्ति का संपोषक	रमाकान्तपाण्डेय	९
विराट के ललाट पर (कविता)	श्री अर्जुनशरणप्रसाद	११
श्री एकनाथ महाराज की आध्यात्मिक चिंतन धारा	श्री जगमोहन चतुर्वेदी	१३
श्रवण भक्ति	श्री डा० एस. वेणुगोपालाचार्य	१५
अन्नमप्रभा - सचित्र समाचार	———	१७
कुलशेखराळ्वार (कविता)	श्री के. एन. वरदराजन्	२७
तत्ववाद के आलोक में भक्ति का स्वरूप	डा० राममूर्तित्रिपाठी	३३
भक्तवत्सल - श्री बालाजी	श्री धारा सुब्रह्मण्यम्	३७
मासिक राशिफल	डा० डी अर्कसोमयाजी	३९

मुखचित्र : ब्रह्मोत्सव के अवसर पर श्री गोविन्दराज स्वामीजी का गरुडोत्सव

प्राकृतिक वैपरीत्य के कारण मानव का जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। वह विचलित हो जाता है। उसके मन पर प्रहार के कारण अचेतन हो जाता है। अकसर इस प्रकार के आकस्मिक घाटनाओं से, वह शोकग्रस्त हो जाता है। जल प्रलय का २ ६ ३भी कुछ समय भी नहीं हुआ और आँसू को पोंछने का मौका भी न मिला है, फिर एक बार आँधी का प्रज्वलन सम्भव हुआ। इस तूफान के कारण ५०० से ज्यादा लोग मर गये और अपार सम्पत्ति का सर्वनाश हो गया। मंदिर में शादी करने को निकले, परन्तु गोदाम में कर लेना पडा। दीवारों को गिर जाने से या छत निकल जाने से अत्यन्त शोक के कारण दीन बन गये न जाने कितने! झोंपडियाँ, घर, भवन, स्कूल, पेड-पौधे आदि को गिर जाने से मंदिर ही आश्रम बन गये बहुत लोगों को। अभी तक नुकासान को आँक रहे हैं, पूरे होने पर कितना होगा बता नहीं सकते। हमारे हाथों में कुछ भी नहीं है, यह और एक बार साबित हुआ हैं!

कल तक सामान्य रूप से जीवन बितानेवाले, दुर्भाग्यवश आज अपने घर-वस्त्र खोकर निराश्रित बन गये हैं। ऐसे भाग्य हीन भाईयों को मदद करने के लिए परोपकारी संस्थाओं को आगे आना चाहिए। तथा उन्हें अपनी सहानुभूति प्रकट करना चाहिए। इसी सिलसिले में ति ति. देवस्थान ने अपने भरसक मदद किया। न केवल अर्थिक सहायता दी, बल्कि लोगों के कष्टों को दूर करने के लिए कदम उठाया। दूर प्रदेशों से आकर यातायात के साधन न रहने से जो यात्रीगण धर्मशालाओं में रुक गये, उनको मुफ्त भोजन तथा अपने गम्यस्थान को पहुँचने के लिए निकटतम केंद्र तक पहुँचाने का प्रबंध भी किया गया है।

सरकार के द्वारा पूरे नुकसान की गणना किया जा रहा है। इतने बहुत सारी सम्पत्ति तथा बन्धु-मित्रों को खोकर बहुत लोग दीनालाप कर रहे हैं। इसी कष्ट समय में उन लोगों की दुःख को दूर करने के लिए विश्व प्रेमी संस्थाओं को आगे आना चाहिए। उन मरे हुए लोगों की आत्माओं को शांति तथा शोक तप्त इन मानवों को धीरज देने के लिए श्री बालाजी से प्रार्थना करते हुए, निस्वार्थ भावना से सक्रम रूप से धन का उपयोग करने को तथा दया व सहानुभूति पूर्वक मदद करने को आगे आने केलिए सप्तगिरि निवेदन कर रही है।

सकल देवता पूजा विधि

(गतांक से)

श्रीवेंकटेश मंगलाशासनम्

१ श्रियः कान्ताय कल्याण निधये निधयेऽर्थि नाम् ।
श्रीवेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम् ।।

२. लक्ष्मी सविभ्रमालोक सुभ्रूविभ्रम चक्षुषे ।
चक्षुसे सर्वलोकानां वेंकटेशाय मंगलम् ।।

३. श्रीवेंकटाद्रिश्रृंगाग्रमंगलाभरणांघ्रये ।
मंगलानां निवासाय श्रीनिवासाय मंगलम् ।।

४ सर्वावयव सौन्दर्य संपदा सर्वचेतसाम् ।
सदा सम्मोहनायास्तु वेकटेशाय मंगलम् ।।

५. नित्याय निरवद्याय सत्यानंद चिदात्मने ।
सर्वांतरात्मने श्रीमद्वेंकटेशाय मगलम् ।।

६ स्वतस्सर्वविदे सर्वशक्तये सर्वशेषिणे ।
सुलभाय सुशीलाय वेंकटेशाय मंगलम् ।।

७. परस्मै ब्रह्मणे पूर्ण कामाय परमात्मने ।
प्रयुंजे परतत्त्वाय वेकटेशाय मगलम् ।।

८. अकाल तत्त्वमश्रांतमात्मनामनुपश्यताम् ।
अतृप्त्यमृतरूपाय वेकटेशाय मंगलम् ।।

९. प्रायः स्वचरणौ पुंसां शरण्यत्वेन पाणिना ।
कृपयादिशते श्रीमद्वेंकटेशाय मंगलम् ।।

१०. दयामृत तरंगिण्यास्तरंगैरिव शीतलैः ।
अपांगैस्सिचते विश्वं वेंकटेशाय मंगलम् ।।

११. स्रग्भूषांबरहेतीनां सुषमाऽऽवहमूर्तये ।
सर्वार्ति शमनायास्तु वेंकटेशाय मगलम् ।।

१२. श्रीवैकुण्ठ विरक्ताय स्वामिपुष्करिणीतटे ।
रमया रममाणाय वेकटेशाय मंगलम् ।।

१३. श्रीमत्सुन्दर जामातृमुनिमानसवासिने ।
सर्वलोकनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम् ।।

१४. मंगलाशासनपरैर्मदाचार्य पुरोगमैः ।
सर्वैश्च पूर्वैराचार्यैः सत्कृतायास्तु मंगलम् ।।

।। इति श्री वेकटेश्वर मंगलाशासनम् ।।

तेलुगु मूल :
श्री एस. बी. रघुनाथाचार्य एम. ए.,
एस. वी. यूनिवर्सिटी, तिरुपति

अन्यदेवता सुप्रभातम्

आदिनारायण सुप्रभातम्

जिह्वेति पद्मभव वेदवचः प्रबुद्धा
लक्ष्मीस्त्वदीय मधरं घृतकज्जलांकम् ।
लाक्षारसांचितमुरश्च समीक्ष्य मुग्धा
नारायणाऽस्तु तव संप्रति सुप्रभातम् ।।

त्वन्नाभिपद्मजनिरेष मुखैश्चतुर्भिः
वेदैश्चतुर्भिरनघैः प्रतिबोधयस्त्वाम् ।
स्वामिन्! व्यवस्यति कृतार्थयितुं स्वमाद्यं
श्री वासुदेव! भगवंस्तव सुप्रभातम् ।।

सेनापतिस्तव सरूप इह प्रसन्नः
द्वारेचरत्यसकृदार्थ! दिदृक्षयाऽसौ ।
पद्मापरिष्कृत तनुं परिदर्शयास्मै
विष्णो! जहीहि शयनं तव सुप्रभातम् ।।

श्री मत्स्य सुप्रभातम्

निर्वेदिनं बुबुधिषे किल सर्गं दक्षं
आम्नायमार्य! विधिमार्तजनैकपक्ष ।
अस्मांश्च बोधय विभो! दययासुवक्षः!
श्रीमत्स्यरूप भगवंस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री कूर्म सुप्रभातम्

त्वां कौस्तुभेन्दुसुरधेनुसुरद्रुमाद्याः
संसेवितु सममिलन्निजभूतिहेतुम् ।
तेभ्यः स्वरूपमुपदर्शय! वीतनिद्रः
श्रीकूर्मरूप भगवंस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री वराह सुप्रभातम्

त्वद्दिव्यसन्दरवपुस्सुचिरं निषेव्य
भावानुरक्त हृदयाऽपि धरा जडाऽभूत् ।
एनां विधे हि सरसां शुभदृष्टिपातैः
श्रीमद्वराह! भगवंस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री नरसिंह सुप्रभातम्

अक्षीणरोषकलुषं परिसान्त्वयन्ती
वक्षोर्पणैर्विहसितै रिममस्मि भीता ।
शिक्षार्हं एष इति संगिरते हि लक्ष्मीः
लक्ष्मीनृसिंह! भगवंस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री वामन सुप्रभातम्

यज्ञः प्रवर्तत इवात्र बलिश्च यष्टा
संपाद्य एष भवता त्रिपदां भुवंच ।

हिन्दी अनुवादक .
सी. रामय्या, तिरुपति·

इत्यह्वरन्ति विबुधाः कुरु तत्त्वदन्त
श्री वामनाख्य! तव संप्रति सुप्रभातम् ।।

श्री परशुराम सुप्रभातम्

नामावशेष इह धर्म इला विषण्णा
राजा प्रजा हृदयरजक एव नास्ति ।
व्यापारयाऽर्थं! परशु भव वीततल्प·
श्रीभार्गवास्तु तवरैणुक सुप्रभातम् ।।

श्रीराम सुप्रभातम्

प्राची प्रशलति तरां ननु पूर्व सन्ध्या
बालातपारुणित कोमल गण्डभागा ।
आलोकशुभ्रवसनं विपुल वसाना
श्रीरामचन्द्र भगवस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री बलराम सुप्रभातम्

अस्तं प्रयाति हिमरस्मिरसावनून
सौन्दर्यमूर्ति मवगत्य वलक्षवर्णाम् ।
पीयूषवाहि मुखपद्ममिव च तेऽद्ये
श्री रेवती मुख मधु प्रिय! सुप्रभातम् ।।

श्रीकृष्ण सुप्रभातम्

दष्टोज्ज्वलाधर विनूतन पल्लवंते
संजातकुंकुमकलंकमुरश्च वीक्ष्य ।
रुष्टां हि सान्त्वय! कृपालय! सत्यभामा
श्री गोपिकारमण! संप्रति सुप्रभातम् ।।

श्री कल्कि सुप्रभातम्

स्निग्धेन मत्सहचरेण वियोजितास्मि
राव्या महान्धतमसावृतयाऽद्ययावत् ।
सात्येव मस्त्विति निषीदति चक्रवाकी
श्री कल्किरूप! भगवंस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री लक्ष्मी नारायण सुप्रभातम्

अक्षीण सौन्दर्य तनु प्रकाश!
लक्ष्मी निवास स्थल दिव्य वक्षः ।
पक्षीशं सेवित पादपद्म!
लक्ष्मीश! नारायण! सुप्रभातम् ।।
आम्नायन्तेमृदुवटदले मौनिहृद्वारिजाते
लक्ष्मीतुंग स्तनगिरि तटे वातभुग्वर्यभोगे ।
श्रीवैकुण्ठे कलश जलधौ नित्य ससक्त हर्षिन्
लक्ष्मी नारायण भगवते नाथ ते सुप्रभातम् ।।

श्री चेन्नकेशव सुप्रभातम्

सृष्टि स्थिति प्रलय हेतु कटाक्षमाला
विद्योति तात्म विभवैक विभासमान ।
स्वामिन् प्रसन्नजनकल्पक! दीनबन्धो!
श्रीचेन्नकेशव! विभो तव सुप्रभातम् ।।

श्री हनुमत्सुप्रभातम्

आयाति भासुरवनीतलमध्य घटि
तत्सन्निधौ कमनिनी हिमबिंदु नाम्ना ।
नून विमुंचति वियोगजमश्र पूर
श्रीवायुपुत्र! हनुमस्तव सुप्रभातम् ।।

श्री मल्लिकार्जुन सुप्रभातम्

पचाक्षरादिमनुमन्त्रितगांगतोयैः
पचामृतैः प्रमुदितेन्द्रमुखैर्मुनींद्रैः ।
पट्टाभिषिक्त हरियुक्त परासनाथ
श्री मल्लिकार्जुन विभो! तवसुप्रभातम् ।।

श्री सुब्रह्मण्य सुप्रभातम्

स्वर्णाम्बरैर्मणिवरैः परिभूषितागा·
सज्जौ इमे तव कृते परिवाहनाय ।
ऐरावतो हयवृषावहिराणमयूरः
पावंजवास! शिवभूस्तव सुप्रभातम् ।।

दूसरा परिच्छेद

शिव पचाक्षरी स्तोत्रम्

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय
भस्मांगरागाय महेश्वराय ।
नित्याय शुद्धाय दिगंबराय
तस्मै न काराय नमश्शिवाय ।।
मंदाकिनी सलिलचन्दन चर्चिताय
नंदीश्वर प्रमथनाथ महेश्वराय ।
मंदारमुख्य बहुपुष्पसुपूजिताय
तस्मै मकाराय वपुषेऽस्तुनमश्शिवाय ।।
शिवाय गौरीवदनांबुजात
सूर्याय दक्षाध्वर नाशनाय ।
श्रीनीलकंठाय वृषध्वजाय
तस्मै शिकाराय नमश्शिवाय ।
वशिष्ट कुंभोद्भव गौतमादि
मुनींद्र देवार्चित शेखराय ।
चन्द्रार्क वैश्वानर लोचनाय
तस्मै वकाराय नमश्शिवाय ।।
यक्ष स्वरूपाय जटाधराय
पिनाकहस्ताय सनातनाय ।
दिव्याय देवाय दिगबराय
तस्मै यकाराय नमश्शिवाय ।।
पंचाक्षरमिद पुण्यं य पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेनसह मोदते ।।

श्री कृष्णाष्टकम्

वसुदेवसुत देवं कसचाणूरमर्दनम् ।
देवकी परमानदं कृष्णं वदे जगद्गुरुम् ।।
अतसीपुष्पसंकाशं हुरसपुरशोभितम् ।
रत्नककणकेयूरं कृष्ण वदे जगद्गुरुम् ।।
उत्फुल्लपद्म पत्राक्ष नीलजीमूतसन्निभम् ।
मंदार गन्ध संयुक्तं चारुहास चतुर्भुजम् ।
बर्हिपिछावचूडागं कृष्णं वंदे जगन्मातरम् ।।
यादवानां शिरोरत्नं कृष्णं वंदे जगद्गुरुम् ।।
रुक्मिणीकेलि सयुक्त पीतांबर शोभितम् ।
अवाप्ततुलसीगन्धं कृष्णं वदे जगद्गुरुम् ।।
गोपिकानां कुचद्वद्व कुंकुमाकितवक्षसम् ।
श्रीनिकेतं महेष्वासं कृष्णं वंदे जगद्गुरुम् ।।
श्रीवत्सांक महोरस्क वनमालाविराजितम् ।
शखचक्रधर देव कृष्णं वदे जगद्गुरुम् ।।
कृष्णाष्टकमिद पुण्य प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
कोटिजन्मकृत पापं स्मरणेन विनश्यति ।।

पंचायुध स्तोत्रम्

स्फुरत्सहस्रार शिखातितीव्रं सुदर्शन भास्करकोटि तुल्यम् ।
सुरद्विषां प्राणविनाशि विष्णो चक्र सदाऽहं शरण प्रपद्ये ।।
विष्णोर्मुखोत्थानिलपूरितस्य यस्य यस्यध्वनिर्दानवदर्पहंता ।
त पाचजन्यं शशिकोटि शुभ्र शंखं सदाऽहं शरण प्रपद्ये ।।
हिरण्मयी मेरुसमानसारां कौमोदकीं दैत्यकुलैक हत्रीम् ।
वैकुण्ठवामाग्रकराभिमृष्टां गदां सदाऽह शरणं प्रपद्ये ।।
यज्ज्यानिनाद श्रवणात्सुराणां चेतांसि निर्मुक्त भयानि सद्यः ।
(क्रमशः)

प्रियप्रवास में राधा का विरह - वर्णन

प्रियप्रवास कविवर हरिऔधजी की एक सर्वोत्तम काव्य - कृति है। इस काव्य में विरह - वर्णन की प्रधानता है। माँ यशोदा और नंदबाबा, राधा एवं अन्यान्य गोपांगनाओ तथा बाल - सखाओ से श्री कृष्ण के वियोग के कारण इस काव्य मे सर्वत्र आँसू ही आँसू दृष्टि गोचर होता है।

संस्कृत साहित्य में विप्रलम्भ - शृंगार की महिमा के अनेक उदाहरण है। यूँ कहें कि विप्रलम्भ - शृंगार के बिना कोई भी काव्य अधूरा है। इसका कारण है कि अर्थात् विरह अवस्था में जब आँखो से आँसू की झड़ी बरसती है तो उस से प्रेम और भी मधुर हो जाता है। जब आँसुओं से अन्तः पुस्तिका पर कोई मनोभाव अकित हो जाता है और यदि वह मनोभाव काव्य के माध्यम से फूट पड़ता है तो वह काव्य की अनुपम निधि हो जाती है। कालिदास के मेघदूत तथा उनके अन्यान्य काव्य विरह के कारण हीं पाठको को मन्त्र - मुग्ध कर लेते है। इसका मनोवैज्ञानिक कारण यह है कि मिलन में प्रेम प्रसुप्त रहता है। किन्तु, बियोग में वह उद्याम गति से साहित्य, काव्य तथा अन्यान्य कलाओ द्वारा मुखर हो उठता है। अत मैथिली शरण 'गुप्त' के खंड - काव्य 'यशोधरा' में यशोधरा कहती है कि— "विरह का हँसना ही तो गान।"

साहित्यरत्न श्री अर्जुनशरण प्रसाद, एम ए॰,
चक्रधरपुर

विरह ने जितने सुन्दर गीतो को सृष्टि की है उतने मिलन ने नहीं। मनुष्य का आकर्षण जितना रूदन के प्रति होता है उतना हास्य के प्रति नहीं।

राधा - कृष्ण के विरह - वियोग की कथा सूरदास के भ्रमरगीतों में अत्यन्त ही मधुर तथा गाम्भीर्य रूप में व्यक्त हुई है। सूर ने जयदेव और चंडीदास की आवृत्ति नहीं की, किन्तु भागवत के लीला - तत्व को जन - भाषा द्वारा लोक - मानस तक पहुँचाया। निर्गुण - मार्गी योगियो और दभी साधुओ के 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' के समक्ष भक्ति का सुगम - मार्ग प्रस्तुत किया; जिसका उद्देश्य संसार का त्याग किये बिना ही अपने आराध्य को सगुण-साकार रूप में प्राप्त करना था। सूर की प्रेमचर्या में संयोग और विरह का विशद व्यापक वर्णन होने के साथ गाभीर्य का अभाव नहीं है।

राधा तथा अन्यान्य गोपागनाओ को प्रबोधने तथा ब्रज में संवाद भेजने हेतु श्री कृष्ण अपने मित्र उद्धव को मथुरा से ब्रज भेजते है। उद्धव और गोपियो के उत्तर - प्रत्युत्तर के समय एक भौंरा आ जाता है। गोपियाँ उस भँवरे से श्रीकृष्ण का साम्य पाकर उन्हें उपालम्भ देना प्रारम्भ करती है। अत इसी से सूरदास ने अपने पदों का नाम भ्रमरगीत रखा है। 'भ्रमर-गीत सार' के सम्बन्ध में किसी ने सच ही कहा है—

श्री वैष्णव देवी — उत्तर तिरुमलैवेल फोटो : के. सीताराम.

" Bhramargeet Sar is a wield and wondering cry of wasted youth "

वस्तुत· भ्रमरगीत सार एक ऐसी रचना है जिसपर किसी भी भाषा के साहित्य को अभिमान हो सकता है। इस में प्राणों का एक चिरन्तन हाहाकार है जो गोपियो की विरह-वेदनाओ में प्रकट हुआ है। विरह-सन्तप्त प्राणो की आकुल विवशता इसके गीतो की झंकार है। बाष्पाकुल कठो की करूण पुकार इसके पदो का सर-सन्धान है। इसमें निराशाओ की कसक है, अभिलाषाओ का उत्पीड़न है और यौवन की भावनाओं की समाधि है। संक्षेप में 'भ्रमरगीत सार' अक्षरो में बधी हुई जीवन की चिरन्तन वेदना की कारुणिक प्रतिमा है।"

उपरोक्त परम्परा के अनुरूप ही कविवर हरिऔधजी ने अपने काव्य का नाम 'प्रिय-प्रवास' रखा है जिसका अर्थ है 'अपने प्रिय का देशान्तर-गमन'

श्री कृष्ण कल मथुरा जानेवाले हैं। राधा अपने सखि से कहती है—

" मनहरण हमारे प्रात जाने न पावे।
सखि! जुगुत हमें तो सुझती है न ऐसी।
पर यदि यह काली यामिनी ही न बीते।
तब फिर ब्रज कैसे प्राणप्योर तजेंगे॥"

यदि रात ही नही बीते तो प्रात काल आयेगा ही नहीं और इसतरह श्रीकृष्ण का मथुरा जाना टल जायेगा। राधा की कितनी सुन्दर उक्ति है। कल्पना लोक में इच्छापूर्त्ति विषयक सिद्धान्त। (Wish - fulfilement theory freud)

किन्तु, प्रकृति के नियम को कोई कैसे टाल सकता है। प्रातःकाल में सूर्योदय की लालिमा को देख कर राधा कह उठती है—

" सब समझ गई मै काल की क्रूरता को।
पल पल वह मेरा है कलेजा कँपाता।
अब नभ उगलेगा आग का एक गोला।
सकल-ब्रज-धरा को फूँक देता जलाता॥"

दुख के समय हमें सारी परिस्थिति उदास दीखती है। कृष्ण के मथुरा जाने का संवाद

(शेष पृष्ठ ३५ पर)

हिन्दी काव्य में भ्रमर गीत;

सगुण भक्ति का संपोषक

भारत की आध्यात्मिक चिंतन-धारा में ईश्वर के साकार और निराकार रूप को लेकर उपनिषदकाल से हीं द्वन्द्व चला आ रहा है। इसमें कभी उसके साकार रूप के पक्षधरों का पलडा भारी हो जाता है तो कभी निराकार रूप के पक्षधरों का वस्तुतः यह द्वन्द्व दृश्यमान बहिर्जगत और आदृश्यमान अन्तर्जगत की भाव-भूमि पर आधारित होने के कारण है जिनकी सत्यता एवं यथार्थता को एकबारगी झुठलाया नहीं जा सकता। फिर भी भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन धारा में ईश्वर के साकार रूप का ही अधिक सबल पृष्टपोषण किया गया है। भगवान श्रीकृष्ण की इस बाजी को.... यदा यदा हि धर्मस्य .... सम्भवामि युगे-युगे .... निराकार ब्रह्म को साकार स्वरूप लेने के परिप्रेक्ष्य में आप्त एवं अधिप्रमाणित वाक्य मान लिया गया है।

यों हिन्दी के कवियों ने भ्रमरगीत की कथा को श्री मद्भागवत के भ्रमर गीत कथा प्रसंग से लिया है पर जहाँ तक उद्देश्य का प्रश्न है वे भागवतकार से पृथक हो गये हैं।

श्री मद्भागवत में कृष्ण के सदेश को लेकर ब्रज में आये उद्धव को गोपियों चारों ओर से घेर लेती हैं। कृष्ण का गुणगान तथा सरण कर वे बिलखने लगती है। इसी समय जब एक भ्रमर वहाँ आकर गुनगुनाने लगता हैं तब उसे कृष्ण एवं उद्धव के प्रतीक स्वरूप मान वे उसे उपालम्भ देने लगती हैं। पर जब उद्धव उन्हें कृष्ण के सदेश को सुनाते हैं तो वे शान्त हो जाती हैं। अर्थात् उद्धव का ज्ञानपूर्ण संदेश उन की भक्ति की विरहाग्नि को परिशमित कर देता है।

परन्तु हिन्दी काव्य में सूर से लेकर अष्टछाप के अन्य कवि, हरिराय, रहीम मलूकदास, सेनापति आलम, रत्नाकर आदि तक भ्रमर गीत लिखने वाले कवियों की गोपियों उद्धव के ज्ञानपूर्ण संदेश को सुनकर परिशमित नहीं होती। अपितु वे कृष्ण के

श्री रमाकान्त पाण्डेय
कलकत्ता–४३,

निराकार स्वरूप पर अनुत्तरनीय विरामचिन्ह लगाकर उद्धव को ही परिशमित एवं पराभुत कर देती हैं।

उद्धव जब गोपियों से कहते है कि कृष्ण तो निर्गुण ब्रह्म, अविगत, अगम एवं अपार है तब सूर की एवं हिन्दी में भ्रमरगीत लिखनेवाले अन्य कवियों की गोपियों को बडी झल्लाहट होती है। वे कृष्ण को कभी भी वे इस रूप में स्वीकार करने की तैयार नहीं होती। वे पूछती है :—

निर्गुण कौन देश को वासी?

. ...

चरन नहीं, मुख नहीं, कहाँ उखल कित बन्धों?
नैन नासिका बिन चोरी करि दधि कौन खांयों?

वेख न रूप, वरन जाके,
नहीं ता कौ हमें बतावत।
अपनी कहौ दरस ऐसे,
को तुम कबहुँ हो पावत।

उद्धव जब गोपियों से कहते हैं :—

जो व्रत मुनिवर बावहीं पर पावहीं नहीं पार।
सो व्रत सीखो गोपिका छोडी विषय विस्तार॥

तब इस पर गोपियाँ कहती हैं :—

विशेष दर्शन के रु. २५ टिकट

श्री बालाजी के विशेष दर्शन के रु. २५ टिकट आन्ध्र प्रदेश के बाहर आन्ध्र बैंक की निम्नलिखित शाखाओं में मिलती हैं।

पाट्ना	पूरी
टाटानगर	रूर्केला
अहमदाबाद	मद्रास (मुख्य)
बरोडा	मैलापूर
सूरत	टी-नगर
बेंगुलूर (एस. आर. रोड)	षेनायनगर
रामराजपेट (बेंगुलूर)	कोयंबत्तूर
बल्लारि	मधुरै
गंगावती	सेलं
रायचूर	तिरुवूरु
होसपेट	कलकत्ता
त्रिवेण्ड्रम्	ब्यालिगंज (कलकत्ता)
एर्नाकुलम् (कोच्चिन)	खरगपूर
भोपाल	दुर्गापूर
जैपूर	चंडीघर
जबलपूर	कर्नाट सर्कस (नई दिल्ली)
बम्बई (मुख्य)	करोल बाग (नई दिल्ली)
चेम्बूर (बम्बई)	रामकृष्णापुरं (नई दिल्ली)
मातुंग (बम्बई)	लक्नो
नागपूर	अलहाबाद
भुवनेश्वर	वारणासी
बर्हंपूर	लुधियाना
रायगड	

(पृष्ठ ९ का शेष)

हम अबला कह जानही जोग जुगुति की रीति।

नंदनंदन ब्रत छोड के ही लिखि पूजे मीति ?

आगे वे चिढ़ कर कहती है :—

"तुम कारे सुफलक सुत कारे, कारे मधुप सारे,
वह कथुरा काजर की कोठरी जे आवहि ते
कारे।"

इस तरह गोपियों के कृष्ण के प्रति अनन्य प्रेम की तीव्रता और तन्मयता का उद्धव पर कुछ ऐसा जादू चलता है कि वे कृष्ण के समान लगनेवाली अपनी वेष-भूषा को परित्यागकर गोपियों जैसी विरहाकुल वेषभूषा में कृष्ण के पास ब्रजवासियों के उनके प्रति अनन्य प्रेम के प्रतीक के रूप में चले जाते हैं। इस तरह यहाँ ज्ञान के ऊपर भक्ति की, मस्तिष्क के उपर हृदय की और सत साधकों द्वारा प्रचारित निर्गुण पथ के ऊपर वल्लभाचार्य द्वारा प्रतिस्थापित सगुण पंथ की विजय हो जाती है। निर्गुण भक्ति की अपेक्षा सगुण भक्ति द्वारा ईश्वर की प्राप्ति कहीं अधिक सहज एवं सुलभ है। वस्तुतः निर्गुण भक्ति इने-गिने ज्ञानियों के लिये ही हैं, बाल बुद्धिवाली साधारण जनता के लिये नहीं क्योंकि ज्ञानार्जन के लिये ईश्वर प्रदत्त अपेक्षित बुद्धि, विद्याध्ययन, स्वधाय, चिंतन-मनन, ज्ञानियों का चिरंतन सत्संग तथा इसके उपरान्त योगाभ्यास द्वारा एकाग्रचिन्तश्यता के सतत अभ्यास की आवश्यकता होती हैं। पर सगुण भक्ति की विद्या में तो प्रियतम की प्राप्ति के लिये विशुद्ध हृदय का प्रेम ही सर्वस्व है। वहां तो "ढाई अक्षर प्रेम" को पढ लेने से ही भक्त ईश्वर को प्राप्त कर लेने में सक्षम हो जाता है।

विराट के ललाट पर

साहित्यरत्न श्री अर्जुनशरण प्रसाद, एम.ए.,
चक्रधरपुर.

विराट के ललाट पर,
असंख्य सूर्य रश्मियाँ,
असंख्य उडुगण,
प्रदीप-सा प्रदीप्त जल रहे ॥ विराट के ललाट पर ॥

असंख्य लोक चल रहे,
असंख्य जीव मर रहे,
दृश्य से अदृश्य हो,
असंख्य जीव मिट रहे,
सूक्ष्म आलोक से
असंख्य जीव आ रहे
अदृश्य से दृश्य में ॥ विराट के ललाट पर ॥

बहुत नक्षत्र मिट रहे,
बहुत नक्षत्र बन रहे,
विनाश के कगार पर,
सृजन के आधार पर,
विधान-क्रम चल रहे ॥ विराट के ललाट पर ॥

सब समय विराट में,
वैराग्य के विधान में,
उत्थान-क्रम चल रहा,
पतन भी है विहँस रहा।
जन्म के समक्ष ही,
मृत्यु भी है पल रहा,
विनाश भी मचल रहा ॥ विराट के ललाट पर ॥

प्रलय के तुरंत बाद,
सृष्टि का विधान देख,
मृत्यु के तुरंत बाद
जन्म का उत्थान देख
सृष्टि का विधान देख
अनवरत क्रम चल रहा ॥ विराट के ललाट पर ॥

शिव का ताण्डव-नृत्यदेख,
आणुविक विस्फोट में।
शिव का लास्य नृत्य देख,
अणु के उचित प्रयोग में।
विराट के विधान में,
अपना कर्तव्य-भार देख,

वि प्रयोग कर,
सृष्टि का संहार कर,
या सृष्टि को समृद्धि के,
कगार पर ला आगार कर।
मरण-पथ के पथिक
अपना कर्तव्य-भार देख ॥विराट के ललाट पर॥

कर्तव्यनिष्ठ जीव का,
गौरवोन्नत ललाट देख।
मानव स्वत्व की रक्षा हेतु
तू उनका उन्नत-भाल देख।
अन्यायी के मुँह की कालिमा,
मिटती न जाल-प्रपंच से
अन्यायी अपने पाप का
फल पाता अदृश्य से।
अदृश्य का वरदान देख,
सृष्टि का विधान देख ॥ विराट के ललाट पर ॥

आकाश-गंगा में अनेक,
सृष्टि का वितान देख।
मंगल-ग्रह पर अनेक,
सभ्यता का निशान देख।
अनन्ताकाश में अनेक
नक्षत्र का वितान देख।
सौर मंडल में अनेक
सृष्टि का विकास देख ॥ विराट के ललाट पर ॥

प्रदीप्त ज्वाल-किरण में,
पतंगे असंख्य जल रहे।
जलने से न डर रहे,
मृत्यु से न विचल रहे,
मरण को सगर्व वे,
सहर्ष वरण कर रहे,
अनन्त के ललाट पर
अनेक सूरमा मिटे
मृत्यु से न वे डरे
मृत्यु-सहचरी से वे
सगर्व गले जा मिले ॥ अनन्त के ललाट पर ॥
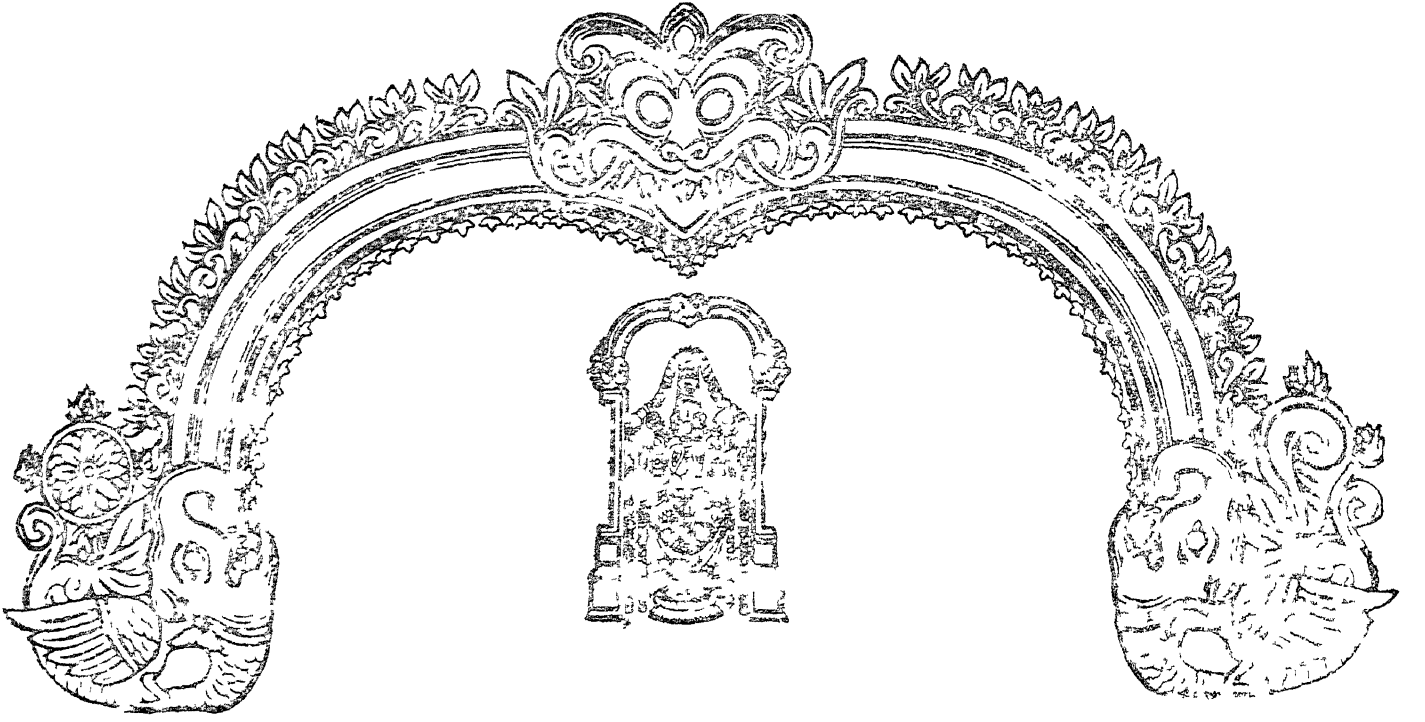
तिरुमल तथा तिरुपति यात्रा की यातायात - सुविधाएँ

भारत के किसी भी रेल्वे स्टेशन से तिरुमल तक रेल के सीधे टिकेट खरीदे जा सकते हैं। तिरुपति तक सीधी रेलगाडियों का प्रबंध भी है। जैसे कि मद्रास से (सप्तगिरि एक्सप्रेस, बडी लाइन), विजयवाडा से (तिरुमल एक्सप्रेस, बडी लाइन), काकिनाड़ा से (पेसजर गाडी बडी लाइन), हैदराबाद से (वेंकटाद्रि एक्सप्रेस, छोटी लाइन और रायलसीमा एक्सप्रेस, बडी लाइन), तिरुचिनापल्लि से (फास्ट प्रेसंजर गाडी, छोटी लाइन) पाकाला, काड्पाडि, रेणिगुण्टा तथा गूडूर जैसे रेल्वे जंक्शनों से तिरुपति तक सुविधाजनक मिली जुली रेलों का प्रबध है। भारत के किसी भी रेल्वे स्टेशन तक जाने केलिए तिरुमल से ही वापसी यात्रा का टिकेट भी खरीद सकते हैं।

मद्रास तथा हैदराबाद से तिरुपति तक नियमित विमान सेवा का प्रबंध है और हवाई अड्डे से उन यात्रियों को तिरुमल तक ले जाकर फिर वापस लाने केलिए एक विशेष बस का प्रबंध भी है। सुदूर प्रदेशों से रेल या बस से आनेवाले यात्रियों को तिरुमल पहुँचाने केलिए लिंक बसों का भी प्रबंध है। प्रातः काल से लेकर रात देर तक तिरुपति-तिरुमल के बीच हर ३ मिनट पर लगातार चलनेवाली बसों का प्रबध है। ए. पी. एस. आर. टी. सी. शाखा द्वारा तिरुपति - तिरुमल के बीच कान्ट्राक्ट कॉरेज बसों का प्रबंध भी है। इस में एक ट्रिप केलिए रु. १३५ देकर ४५ यात्री जा सकते हैं। तिरुपति से तिरुमल तक पैदल दो रास्ते भी हैं जो भव्य सुंदर सात पहाडियों से होते हुए हैं। अनेक यात्रीगण अपनी मनौती के रूप में पैदल रास्ते से आनंद उठाते जाते हैं।

तिरुपति से तिरुमल तक दो घाटी रोड हैं जिन में से एक तिरुमल जाने केलिए द्वितीय तिरुमल से लौटने केलिए हैं।

व्यक्तिगत कारों के लिए भी तिरुमल पर जाने की अनुमति है। यहाँ पर टेक्सियाँ भी मिलती हैं।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,

ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

श्री एकनाथ महाराज की आध्यात्मिक चिंतन धारा

मूल लेखक
एम. एम. देशपाण्डे एम.ए.,

अनुवादक :
जगमोहन चतुर्वेदी.

आध्यात्मिक अनुभव·

श्री एकनाथ महाराज के साक्षात्कार पर विचार करने के पहले यह उचित होगा कि हम यह समझने का प्रयत्न करें कि साधारणत आध्यात्मिक अनुभवो का प्राकटय कैसे होता है और उनका स्वभाव क्या है। इसके बाद ही हम श्री एफनाथ के आध्यत्मिक अनुभवो को समझ सकेंगे जिनका वर्णन एकनाथ ने अपने भागवत ग्रथ (एकनाथी भागवत) में किया है। अत पहले हम आध्यात्मिक अनुभवो के जन्म और स्वभाव पर ही विचार करेंगे।

(1) आध्यात्मिक अनुभवों का प्राकट्य और स्वरूप.—

जब साधक दीर्घकाल तक सतत दैवी नाम पर भाव पूर्ण ध्यान करता है, उसके मस्तिष्क में आध्यात्मिक ऊर्जा का प्रादुर्भाव होता है जो उसकी सुसुप्त प्रतिभा को जाग्रत कर देती है। उसके प्रत्यय के सब केन्द्रो को जीवित कर देती है और उसकी अभिव्यक्ति बाह्य जगत में अतीन्द्रिय ज्योति, नाद, स्वाद, गध और स्पर्श के रूप में होती है। यह अनुभव सामान्य भौतिक घटना प्रतीत होते हे, परन्तु वास्तव में ये भौतिक घटना से भिन्न होते हे क्योकि वे मस्तिष्क से बाहर निकलते हे।
पातजलि ने अपने एक सूत्र में इनका वर्णन किया है

ततः प्रतिभ-श्रवण-वेदनादर्श-आस्वाद वार्ता जायन्ते।

(III-37)

अर्थात्

उससे प्रतिभ, नाद, स्पर्श, ज्योति, स्वाद और गंध उत्पन्न होते है।

श्वेताश्वतरोपनिषद में इस आध्यात्मिक ज्योति के विभिन्न रूपो–कुहर, धूम, सूर्य, वायु, अग्नि, खद्योत (जुगनू) विघ्युत, स्पटिक मणि और चन्द्रमा – का वर्णन करते हुए बताया गया है कि योगाभ्यास करने वाले को पहले इनका अनुभव होता है। ये रूप ब्रह्म की अभिव्यक्ति करने वाले होते है।

नीहार धूमार्कानिलानलाना
खद्योत विद्युत स्फटिक शशी नाम्।
एतानि रूपाणि पुरः सराणि
ब्रह्मण्यभिव्यक्तिकराणि योगे॥
(अ २-श्लो. ११)

(II) एकनाथी भागवत में वर्णित कुछ अनुभव:

एकनाथी भागवत श्रीमद् भागवत के एकादश स्कंध पर विरचित मराठी टीका मात्र है अत इस ग्रथ में आध्यात्मिक अनुभवो को वर्णन करने की गुंजाइश बहुत कम है। एकनाथ ने अपने अभंगो में इनका पूर्णत वर्णन किया है।

एकनाथी भागवत में कुछ ऐसे स्थल हे जहाँ कुछ आध्यात्मिक अनुभवो का वर्णन सरसरी तौर पर किया गया है। कहीं-कहीं इनका सदर्भ सूचनार्थ दिया गया है।

एकनाथ ने आध्यात्मिक ज्योति, नाद और अमृत रस का कथन किया है। उन्होने जनार्दन, विष्णु, कृष्ण और स्वरूप दर्शन का वर्णन किया है। उन्होने यह सूचित किया है कि परमात्मा सर्वत्र, सब प्राणियो में व्यापी है। उन्हो ने उस परमानन्द का भी वर्णन किया है जो साधकों को आतम दर्शन से उपलब्ध होता है।

ईश्वर की सर्व व्यापकता के संबध में कुछ सतों के वचन उद्धृत किए जाते है

कबीर:

तेरा साईं तुझ में ज्यों पुहपन में वास।
इत-उत ढूँढत क्यों फिरै, हिरदै में हरी वास॥

तुलसीदास:

(१) हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मै जाना
(२) जय जैय अविनासी सब घट वासी
व्यापक परमानंदा
(३) सिया राम मय सब जग जानी।
करहुँ प्रणाम जोदि जुग पानी॥

(शेष पृष्ठ २९ पर)

ब्रह्मोत्सव के अवसर पर श्री कोदडरामस्वामी मदिर के श्री राम, लक्ष्मण तथा सीता की उत्सव मूर्ती, तिरुपति
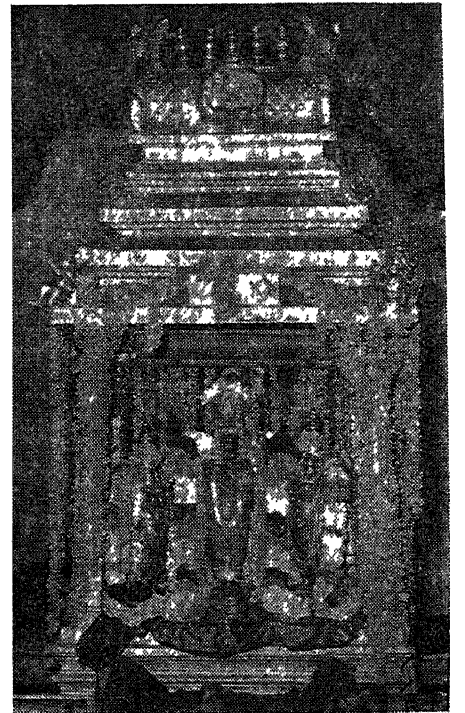
तिरुमल-यात्रियों को सूचनाएँ (केशसमर्पण)

केश समर्पण करन का रहस्य मानव के सपूर्ण अहभाव को छोडकर उस मूल विराट की शरण में विनीत भावना से अपने को समर्पित करना ही है । हमारे यहाँ केश समर्पण इसलिए एक प्रचलित प्रथा है ।

लेकिन पारपरिक एव साप्रदायिक पद्धति में भगवान को केश समर्पण करने से ही मनौती पूरी होगी । यात्रियों की इस प्रमुख मनौती को पूर्ण करन केलिए देवस्थान ने अनेक कल्याण कट्टाओं का प्रबध किया है । यह विषय विशेष रूप से कहने की आवश्यकता नहीं है कि अनधिकारी नाइयों से अन्य जगह सिरमुण्डन कराने से पवित्रता नहीं रहेगी और भक्त की मनौती भी पूरी नहीं होगी । देवस्थान के नियमित नाइयों से सिर मुण्डन करवाने से ही वे केश भगवान को समर्पित किये जायगे ।

इसलिए यात्रियो से निवेदन है कि वे केवल देवस्थान के कल्याण कट्टाओ में ही अपने केश समर्पण करे जहाँ पर अनेक अनुभवी नाई रहते हैं और जिस के नजदीक ही नहाने केलिए नियत शुल्क चुकाने पर गरम पानी देने की व्यवस्था भी है । जो यात्री केश समर्पण काटेज में ही करवाना चाहते हैं, वे देवस्थान के द्वारा इस का प्रबध कर सकते हैं ।

केश समर्पण केलिए उचित दर पर कल्याणकट्टाएँ तथा काटैजो के पास टिकट बेचे जाते हैं । नाइयों को अलग रूप से पैसे देने की आवश्यकता नहीं है ।

कुछ धोखेबाज व्यक्ति सिर मुण्डन का कम शुल्क लेकर, भगवान के दर्शन शीघ्र ही करवाने के वायदे करके यात्रियों को अनधिकारी नाइयो के पास ले जा रहे हैं ।

यात्रियों से निवेदन है कि देवस्थान के कल्याणकट्टाओ को छोडकर अन्य जगह सिर मुण्डन न करवावें । ऐसा करवाने से वे केश भगवान को समर्पित नही समझे जायेंगे और यात्रियों की मनौतियाँ भी पूरी नही होंगी । बालाजी के शीघ्र दर्शन की सुविधा के लिए ति ति देवस्थान के द्वारा जो उत्तम प्रबध किये गये हैं, कोई भी व्यक्ति भगवान का दर्शन से शीघ्रतर करवाने में असमर्थ है ।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,

ति. ति देवस्थान, तिरुपति.

श्रवणभक्ति

(गतांक से)

कर्णाटक के घर घर में हरिदासो से गायी श्रीकृष्ण की बाललीलाएँ और उत्तर भारत मे सूरदास आदि की गायी गयी बालक्रीडाएं भारतीय ललनाओ केलिए वरदान है। दधिमंथन करते समय, अपने बाल-बच्चों को सुलाते समय बरतन मॉजते समय, धान कूटते समय तथा दूध दुहते समय उनको अपने कार्य में तल्लीन रखने तथा परिश्रम से होनेवाली थकावट को दूर करने तथा बाल-बच्चो को आह्लादित करने का सदवकाश इन्हीं गीतो से प्राप्त हो जाता है। अस्तु। उदाहरणार्थ सूरदास तथा पुरंदर दासों से वर्णित श्रीकृष्ण की बालक्रीडाओं के द्वारा उनमें स्थित वात्सल्य-भक्ति का निरूपण निम्नाकित पदो में द्रष्टव्य है। विभिन्न प्रसगो के वर्णन दोनों ने समान रूप से किये हैं। पहले पुरंदरदास का पद और अर्थ, उस के बाद सूरदास के पद तुलना केलिए नीचे दिये गये हैं।

अ) खेलकूद—(पुरंदरदास का पद)
चेंडु बुगरि चिण्णिकोलु जगवनाडुत...
भक्तजनरिगोलिव नीनु मुक्तिदातनु।

(कंदुक, लट्टु तथा डंडो का खेल खेलते अपने लोगो को दर्शन देकर उनको मुक्ति प्रदान की)

अब सूरदास से वर्णित श्रीकृष्ण के खेलकूद का वर्णन सुनें — खेलतस्याम ग्वालन संग।

सुबल हल धर अरुश्रिदामा करत नाना रंग।
हाय तारी देत भाजत सब करि करि होड"

आ) आखामचोना—पुरंदरदास का वर्णन—
"नीनारवहेलेन्न कण्णु मुच्चिवे। मौनव गौंडरियदंतिप्प मगुवे ॥"

(ऐ बच्चा तू मौन रहकर मेरी आंखें मूंद रहा है। जरा बताओ तू किसका बच्चा है। ऐसा प्रतीत होता है मानो तू कुछ नहीं जानता किन्तु तुमसे अधिक ज्ञानी और कौन है?

सूरदास का वर्णन—

"हरि अब आपनि आंख मुंदाई।
सखा सहित छपाने जहंतहं गये भगाई" ॥

ई) श्रीकृष्ण की माता यशोदा से अभियोग

पुरंदरदास का वर्णन—
"आड होदल्लि मक्कलु एन्ननु आडिकोबरू नोडम्म।
नीनेन्न पेत्तिल्लवंते अम्मा नानिन्न मगनल्लवंते॥

(देखो माँ खेलने जाऊं तो सभी लडके आपस में बोलते हैं कि मै तुम्हारा लडका नहीं हूँ और तुम ने मुझे नहीं जनमा है।)

सूरदास का पद—
"मैया मोहि दाऊ वहुत खिझायो।
मोसों कहत मोल को लीनो तोहि जसुमति कब जायो।
कहा कहों एहि रिस के मारे खेलत हों नहीं जातु।
सूरदास मोहि गोधन की सौ हों माता तू पूत।

ई) गोपियो का अभियोग — पुरंदरदास का वर्णन—

"निन्न मगन लूटिघनवम्म करेदु, चिण्णगे बुद्धिय हेलेगोपम्मा...केरिय बसवन माडिबिट्टेयम्म।

(शेष पृष्ठ २५ पर)

डा० एस. वेणुगोपालाचार्य,
माण्ड्या.

तिरुमल - तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

कोइल आलवार तिरुमंजनम्

आगम शास्त्रों ने देवस्थलो मे पवित्रता की आवश्यकता तथा वैशिष्ट्य का विशेष उल्लेख किया है। मदिर के अन्दर प्रवेश करने के पहले स्नान करना, पादरक्षाओ को छोडना इत्यादि कुछ नियम इसी पवित्रता को बनाये रखने केलिए ही निर्णीत किये गये हैं। मदिर के अहाते में ही नहीं बल्कि गर्भगृह में भी आगम शास्त्र के अनुसार एक पवित्र तथा आरोग्यदायक कार्यक्रम सपन्न होता है जो कोइल आलवार तिरुमजनम् के नाम से अभिहित है।

इस सेवा विधान मे सभी मूर्तियाँ तथा अन्य वस्तुएँ दीपों सहित गर्भगृह से बाहर लायी जाती हैं। और मूलमूर्ति को पानी अदर नहीं आनेवाले आच्छादन (water proof covering) से अच्छादित किया जाता है। उस के बाद पूरा गर्भ-गृह, दीवार, जमीन तथा ऊपरी भाग अधिक गरम पानी से खूब साफ किया जाता है। तदनतर सर्वत्र कुकुम, कर्पूर, चदन, हल्दी इत्यादि से लेप किया जाता है। फिर मूलमूर्ति से अच्छादन हटाकर मूर्तियाँ, दीप और अन्य चीजो को गर्भ-गृह के अन्दर रखाया जाता है। मूलमूर्ति को पवित्र पूजाएँ समर्पित की जाती है और भोग लगाया जाता है।

यह पवित्र कार्यक्रम वर्ष मे केवल चार बार मनाया जाता है- (१) युगादि के पूर्व (तेलुगु नूतन वर्ष), (२) मिथुन कटक सक्रमण के दिन (आणिवारि आस्थानम्) के पूर्व, (३) दिवाली के पूर्व (४) वार्षिक ब्रह्मोत्सव के पूर्व।

इस सेवा को मनाने केलिए सेवा की दर रु १,७४५/- है। १० लोगो को प्रवेश मिलेगा। कार्यक्रम के अत मे गृहस्थ को बडा, पापड, दोसै इत्यादि प्रसाद भी प्राप्त होगे। यह सेवा दैनिक पूजा कार्यक्रम के बाद प्रात ८ बजे सपन्न होती है। उस दिन भगवान का दर्शन दोपहर ३ बजे से चालू होगा।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,

ति. ति देवस्थान, तिरुपति

अन्नमप्रभा – सचित्र समाचार

पदकविता पितामह तथा भक्त शिरोमणि श्री ताल्लपाक अन्नमय्या, जिन्होंने भगवान बालाजी के ऊपर ३२,००० कीर्तनाओं को रचे, उनके प्रचार प्रणाली के मुख्य कार्यक्रमों के चित्र इस विशेष अनुबंध संचिका में दिये जा रहे हैं—

१) श्री बालाजी त्यागराजस्वामी तथा अन्नमाचार्य की उत्सव : .... पृष्ठ १७ से २२ तक

२) ताल्लपाक ग्राम को दत्तक ग्रहण करने का २३, २४ समारोह ....

* * * * * *

श्री बालाजी के भक्त अन्नमाचार्य व त्यागराजस्वामी की उत्सव दि· २५–३–७९ से २–४–७९ तक मनायी गयी है।

* * * * * *

श्री बालाजी, अन्नमाचार्य व त्यागराज स्वामी के महोत्सव सिलसिले में दि० २५–३–७९ को श्री बालाजी, अन्नमाचार्य व तिरुमलाचार्य के चित्रपटों को जुलूस में अन्नमाचार्य कलामंदिर तक ले जाता हुआ दृश्य
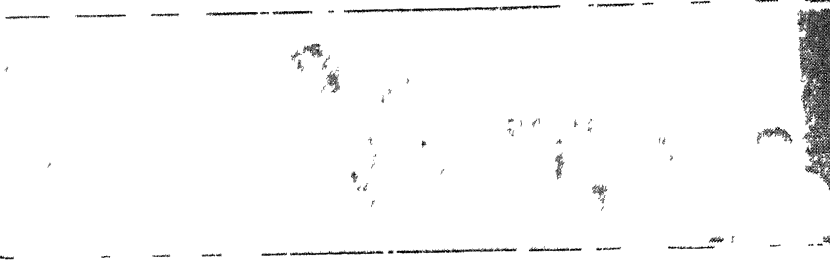
आठ दिन तक मनाये गये इस वर्द्धन्ति तथा संगीतोत्सव के उद्घाटन सभा में स्वागत करते हुए श्री पी वी आर. के. प्रसाद, कार्यनिर्वहणाधिकारी तथा मुख्यातिथि श्री बी. रामराजु

सभाध्यक्ष श्री एम. शान्तप्पा, उपकुलपति श्री वेकटेश्वर विश्वविद्यालय ने अन्नमाचार्य की कीर्तनाओ की २६ वीं सपुटी को आविष्करण करते हुए ।

सर्वश्री पी. वी. आर. के. प्रसाद, आई ए एस, कार्यनिर्वहणाधिकारी, एम. शान्तप्पा, उपकुलपति श्री वेकटेश्वर विश्वविद्यालय, कामिसेट्टि श्रीनिवासुलुसेट्टि, विशेषाधिकारी, अन्नमाचार्य प्राजेक्ट तथा चन्द्रशेखर नायुडु, न्यास मण्डल के सदस्य को इस चित्र में देख सकते हैं ।

उसी दिन शाम को श्री वोलेटी वेकटेश्वर्लुजी से स्वर संगीत सभा सम्पन्न हुई ।
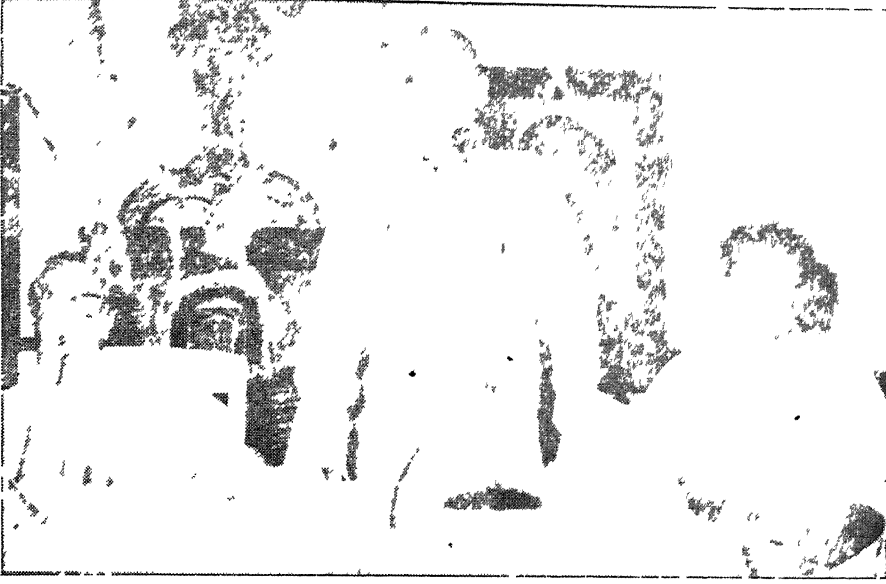
दि० २६–३–७९ को अन्नमाचार्य की कीर्तनाओं के सपादक विभाग के विशेषाधिकारी श्री जी रामसुब्बशर्मा ने भाषण दिया। श्री के एम. कृष्णमूर्तिजी सभाध्यक्ष थे।

श्री के मल्लिक और उनके बृद से संगीत सभा।
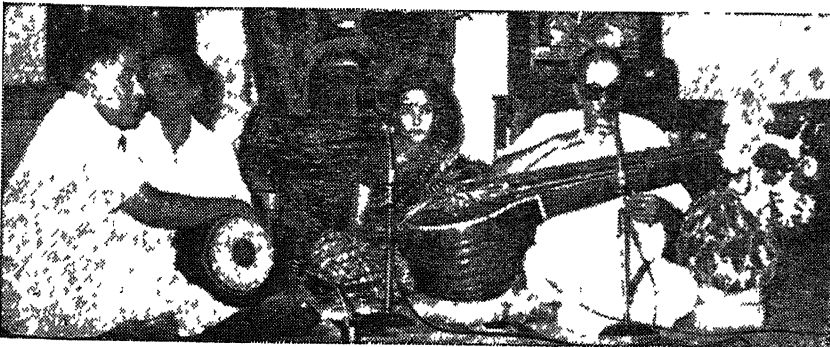
श्री मचाल जगन्नाथरावजी से वीणागान-संगीत कार्यक्रम।

दि० २७-३-७९ को डा० अर्कसोमयाजी की अध्यक्षता मे सम्पन्न साहित्यगोष्ठी मे श्री यल्ल-राजु श्रीनिवासराव ने भाषण दिया । श्री अन्न-माचार्य प्राजेक्ट के विशेषाधिकारी श्री कामिसेट्टि श्रीनिवासुलुसेट्टी को भी चित्र में देख सकते हैं ।

श्री वेकटेश्वर विश्वविद्यालय के तेलुगु विभा-गाधिपति डा० जी एन. रेड्डीजी की अध्यक्षता में सरस्वतीपुत्र श्रीमान पुटर्पात नारायणाचार्य ने भाषण दिये ।

ति ति देवस्थान के आस्थान विद्वान श्री टी एन कृष्णन् तथा कुमारी वि जि जि. कृष्णन् के युगल - वायलीन की सगीत सभा ।
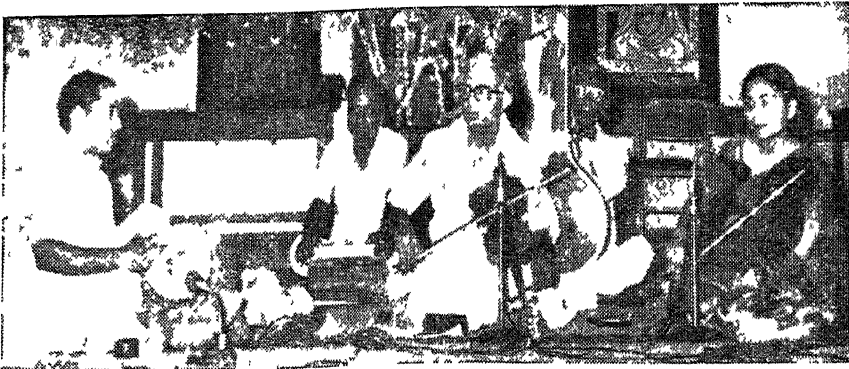
देवस्थान के आस्थान विद्वान श्री नामगिरिपेट्टै कृष्णन् और उसके बृन्द से नागस्वर कचेरी ।

श्री जी. शिवशंकरराव की अध्यक्षता में श्री वि एस. वेकटनारायण ने भाषण दिया। संगीत नृत्य कलाशाला के प्रिन्सिपाल श्री ड़ी. पशुपति भी मौजूद हैं ।

देवस्थान की आस्थान विदुषी संगीत कलानिधि श्रीमति एम. एस. सुब्बलक्ष्मी से गानकचेरी ।

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति के प्रिन्सिपाल श्री एम डी. बालसुब्रह्मण्यम की अध्यक्षता में सम्पन्न सभा में श्री एस. सच्चिदानंदजी ने भाषण दिया ।
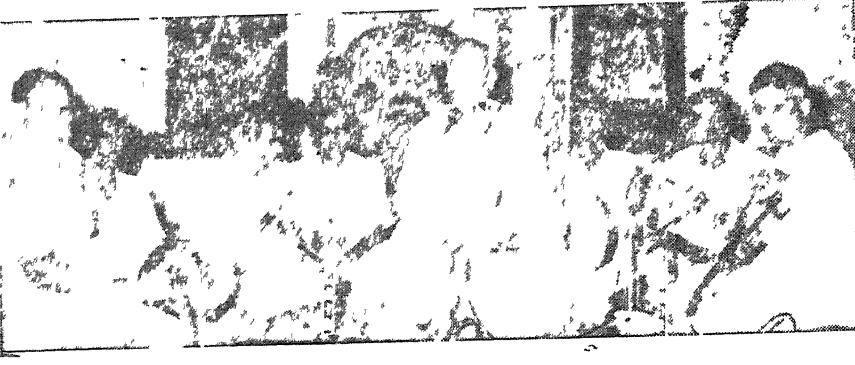
गान कला - प्रपूर्ण डा० एस पिनाकीपाणी से गात्र संगीत सभा ।
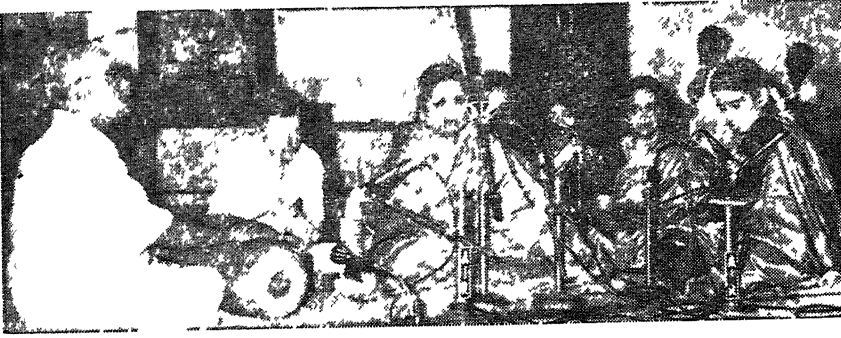
देवस्थान की आस्थान विदुषी श्रीमति एम एल, वसतकुमारी से गान कचेरी ।

सगीत शिरोमणि श्रीमति मणिकृष्णस्वामी से गान कचेरी ।
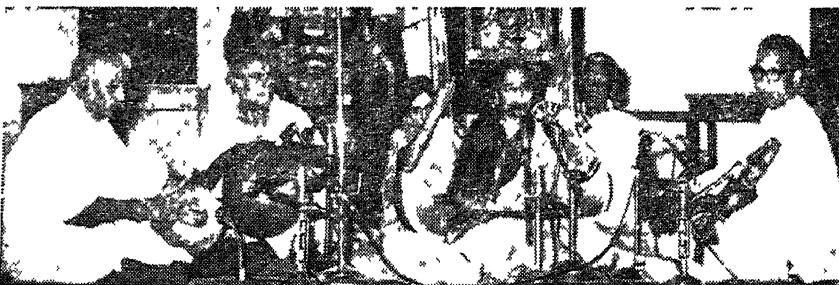
मधुर गायनी कुमारी श्रीरंगगोपालरत्नम् से सगीत सभा ।

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् से ताल्लपाक ग्राम को दत्तक ग्रहण करने का समारोह

पदकविता पितामह श्री अन्नमाचार्य के जन्म-स्थल ताल्लपाक ग्राम को दत्तक ग्रहण किया गया। उसे और एक सुदर तिरुचानूर जैसा पुण्यस्थल बनाने का संकल्प है।

उस ग्राम के श्री केशवस्वामी मंदिर के पास देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी वी. आर. के. प्रसादजी अपने परिवार सहित और न्यासमण्डल के सदस्य श्री चन्द्रशेखर नायुडु और अन्य प्रमुख।

शाम को आयोजन की गायी सभा में देवस्थान के आशय को बताते हुए कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी. वी. आर के प्रसादजी, आई. ए. एस.

देवस्थान के न्यासमण्डल के सदस्य श्री चन्द्रशेखर नायुडु भाषण देते हुए ।

कार्यक्रम के अत में देवस्थान के श्रीवेंकटेश्वर संगीत नृत्य कलाशाला के प्रिन्सिपाल डी. पशुपति जी से स्वर सगीत कचेरी ।

"सुभद्रा कल्याण" नामक नृत्त नाटक का भी प्रदर्शन किया गया ।

(पृष्ठ १५ का शेष)

(यशोदाजी तुम्हारे पुत्र की नटखटी बहुत बढ गयी है। उसे आपने स्वेच्छाचारी सांड बना छोड दिया है। उसे जरा बुलाकर अच्छी बातें क्यो नही सिखातीं ?)

सूरदास का विवरण—

"जो तुम सुनहु जसोदा गोरी ।
नन्दनन्दन मेरे मन्दिर में आजु करनगये चोरी।
हौ भई आनि अचानक ठाढी कह्यो भवन में कोरी ।
रहे छपाई सकुचि रचक हुबे भई सहज मति भोरी ।।"

उ) गोपियों का लाड-प्यार पुरन्दरदास का पद:

"कामिनियरेल्ल नेरेदु कंदनीडनाटवाडि ।
प्रेमदिंद मुद्दाडि कामित फलवीव ।
भक्तजनरोडेय स्वामी पुरदरविठलरायन " ।।

(सभी गोपियां मिलकर बच्चे के साथ खेलकर उसे प्यार से अपनी छाती से लगाकर लाड-प्यार करती है। यह बच्चा कमित-फल-प्रदायक भक्तो के प्रभु पुरदर विठ्ठल है ।)

सूरदास का पद—

"हरि को बालरूप अनूप। निरखिरहि व्रज नारि इकटक अगअग प्रतिरूप ।
बियुर अलकेरहि बदन पर, बिनहि परन सुभाइ देखि खंजन चंद के सब करत मधुप सुहाइ ।।

श्रीकृष्ण का रूप - वर्णन —पुरंदरदास का पद—
" यशोदे निन्न कंदगे एनु रूपवे । शिशुवल्लनिन्न मग कृष्ण जगत्पतिये ।

हसुगल करेवल्लि हलवु रूप तोखु । विसिय हालिडुवल्लि बन्न हिनिरुव ।।
मोसर कडेवल्लि मुंदे ता निंदिरुव । हसनागि मोसर माडि बेण्णेय मेल्लुव ।।
ओब्बर मनेयल्लि मलगि तानिरुप । ओब्बरमनेयल्लि मलगि तानिरुव ।।
ओब्बर मनेयल्लि बेण्णे कद्दु मेलुव । ओब्बर मनेयल्लि रतिक्रीडेयाडुत्तलिरुव ।।
ओब्बर मनेयल्लि पुड चेंडनाडुव । हिंदे ता निंदिरुव मुंदे होगुत्तिरुप ।।

इदुमुखियर कूड सरसवाडुव। बंदु नोडे यशोदे बण्णदमातल्ल । नंदगोपन कन्द पुरन्दरविठल ।।"

(यशोदाजी क्या रूप है तुम्हारे दुलार का । वह शिशु नहीं है। तुम्हारा पुत्र जगत्पति है जो गाय दुहते समय वह विविध रूप धरता है। दूध गरम करते समय पीठे के पीछे खडा रहता है। दही मथते समय आगे खडा रहता है। साफ धोखा देकर मसक खा लेता है। एक के घर में सोता रहेगा। एक के घर में मक्खन चखता रहेगा। रति क्रीडा करते दूसरे में गेन्द खेलता रहेगा। पीछे रहकर आगे जाती हुई इन्दुमुखियों के साथ किल्लोल करेगा। यशोदाजी आइये, देखिये। मेरी बातों में अत्युक्ति नहीं है। नन्द-गोप का दुलारा पुरदर विठ्ठल है ।)

सूरदास का पद :—

"नेक गोपाल मोको देरी ।
देखो कमलवदन नीके केरि ता पाछे तू के नियालेरी ।
अतिकोमल करचरन सरोरुह अधर रसन नासी सहि ।
निगमन-धन सनकादिक सरबसु, भाग बडे पायी हे तै री
जाके रूप जगत के लोचन कोटि चन्द्र रवि लाजत है री ।
सूरदास बलि जाइ जसोदा गोपित - प्रान पूतना बैरी ।

सन् १५६५ ई० में विजयनगर के आक्रमण तथा विनाश से दासकूट के कार्य स्थगित हो गये। सत्रहवीं शती में श्रीराघवेन्द्रस्वामी ने मंत्रालय में हरिदासो को संघटित किया। कुछ ही समय बाद विजयदास के प्रयत्नो से दाससाहित्य का (शेष पृष्ठ २७ पर)

तिरुवेलनगाड में विराजमान आनन्द नटराज की मूर्ति फोटो : के. सीताराम
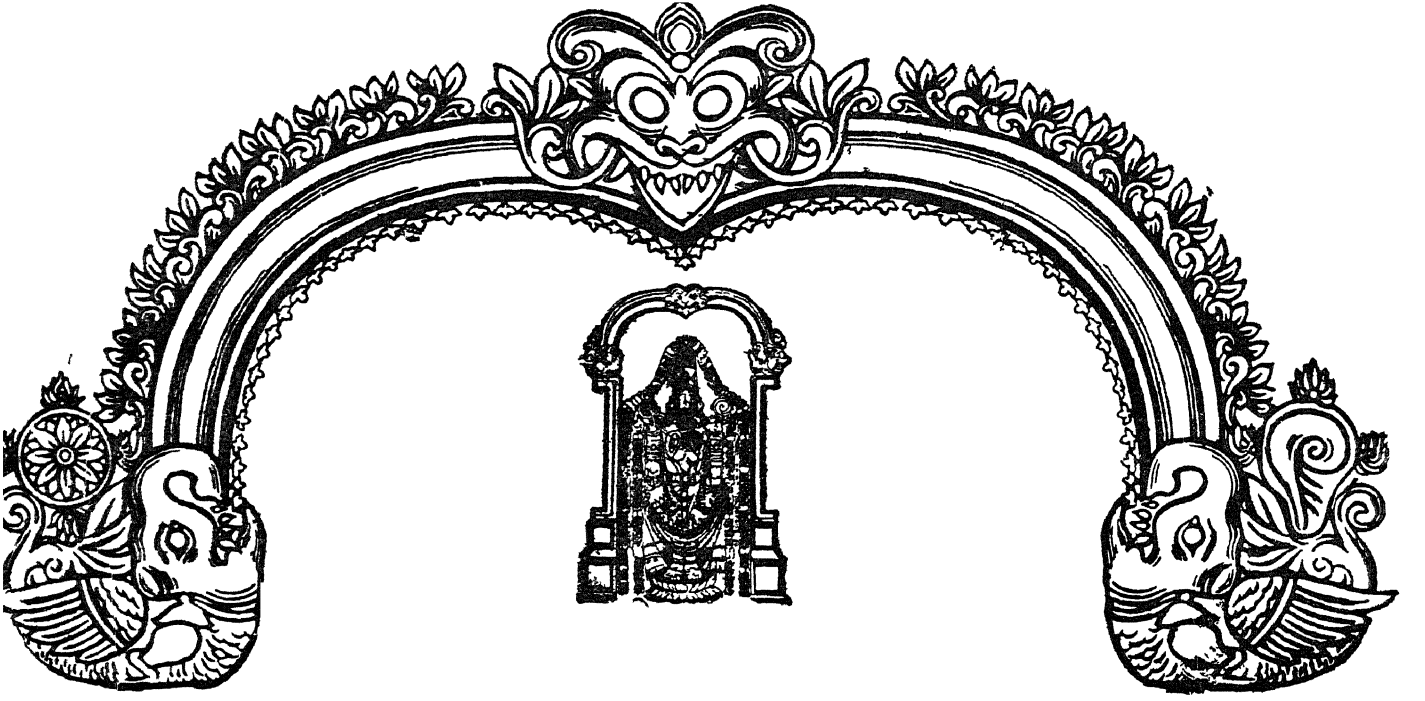
तिरुमल – यात्रियों को सूचनाएँ

भगवान बालाजी के दर्शन

ति. ति देवस्थान को यह विदित हुआ कि कुछ धोखेबाज व्यक्ति यात्रियों से पैसे लेकर भगवान के दर्शन शीघ्र ही करवाने का वादा कर रहे हैं

देवस्थान यात्रियों को विदित कराना चाहता है कि जहाँ तक सभव हो एक सयत एवं क्रम पद्धति में भगवान बालाजी के दर्शन कराने का भरसक प्रयत्न कर रहा है। प्रतिदिन दस हजार से अधिक यात्री भगवान बालाजी का दर्शन करने आते हैं और दर्शन की सुविधा केलिए दिन में १४ घंटे का समय मदिर का द्वार खोल दिया जाता है जिस में ११ घटे सर्वदर्शन केलिए नियत है। यदि यात्रियों की भीड अधिक हो तो क्लोजड षेड्स से और अधिक न हो तो सुरक्षित महाद्वार से दर्शन का प्रबध किया जा रहा है।

वे यात्री जो समय के अभाव, अस्वस्थता अथवा अन्य किसी कारणवश क्यू में खडे नही सकते वे प्रति व्यक्ति रु. २५/- मूल्य का टिकट खरीद कर मंदिर के अन्दर ही ध्वजस्तंभ के पास से क्यू में शामिल हो सकते हैं जिस से कि उन को ५ मिनट के अन्दर ही भगवान के दर्शन प्राप्त हो सके।

यात्रियों से ति ति. देवस्थान का निवेदन है कि वे बाहरी व्यक्तियों की सहायता से दर्शन प्राप्त करने का प्रयत्न न करे। शीघ्र दर्शन की सुविधा केलिए ति. ति. देवस्थान के द्वारा जो उत्तम प्रबंध किये गये हैं, कोई कभी व्यक्ति भगवान का दर्शन उससे शीघ्रतर रवाने में असमर्थ है। अतः कृपया यात्रीगण ऐसे धोखेबाजों की झूठे वायदों से हमेशा सतर्क रहें।

भगवान के दर्शन प्राप्त करने में जो विलब और प्रतीक्षा करने से जिस सहनशीलता का अभ्यास होता है, वह तो कलियुगवरद श्री वेंकटेश्वर के दर्शन प्राप्त करने केलिए अपेक्षित ही है और वह एक प्रकार की तपः साधना भी है जिस के द्वारा भगवान का संपूर्ण अनुग्रह प्राप्त होता है।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति ति. देवस्थान. तिरुपति .

(पृष्ठ २५ का शेष)

दूसरा युग प्रवर्तित हुआ। श्रीविजयदास का जीवितकाल सन् १६८७ से १७५५ माना जाता है। श्रीविजयदास के शिष्यो में मोहनदास का कोलुहाडु और जगन्नाथदास का 'हरिकथामृत सार' अठारहवीं शती के प्रसिद्ध वैष्णव - भक्ति प्रतिपादक काव्य माने जा सकते हे।

मोहनदास के 'कोलुहाडु' में २१७ गीतात्मक पद हे। इस काव्य का आरंभ विघ्नेश की स्तुति से होकर दशावतारो तथा चौबीस भगवद्रूपो का सुन्दर वर्णन करता है। कृष्णार्जुन एव सुभद्रा और रुक्मिणी के वाग्वादो से विष्णु की निन्दास्तुति नितान्त मनोहारी है। अन्त में अर्जुन और सुभद्रा श्रीकृष्ण और रुक्मिणी से क्षमायाचना करते हे। उसमें वर्णित निन्दास्तुति का एक उदाहरण निम्न प्रकार है।

"हेकृष्ण, समुद्रराजा ने तुम को अपनी पुत्री कैसे दी। तुम्हे रहने भवन या ठहरने जगह नहीं है। बलि ही इसका साक्षी है। तुम्हारा कुल या गोत्र नहीं है। सभी दैत्य तुम्हारे शत्रु हे। पत्नियो और सन्तानो की गिनती ही नहीं हो सकती" इत्यादि।

श्रीजगन्नाथदास कृत हरिकथामृतसार एक सहस्र पदोवाला बडा काव्य है। इसमें ३२ संधियाँ हे। चूँकि जगन्नाथदास अपरोक्ष ज्ञानी एवं प्रकांड विद्वान थे, उनकी शैली बहुत क्लिष्ट है किन्तु वह श्रुत्यर्थ - प्रतिपादक उद्ग्रन्थ है। भगवान की व्याप्ति, उनकी भक्त - वत्सलता नाम-स्मरण की महिमा मध्वमत के सिद्धांत, भक्तिसाधनो के विधान गायत्री आदि प्रमुख वैदिक मत्रो के गूढार्थ आदि विस्तृत रूप से वर्णित हे। उपर्युक्त विषयों के बारे में उनकी विशिष्टता - पूर्ण पदो के नमूने देखिये।

अ) भगवन्महिमा:—

"चेतनाचेतन विलक्षण नूतन पदार्थगोपेलगे बलु
नूतन सुदर के सुंदर रसके स्वरूप।
जातरूपोदर भव्यादरोलातन प्रतिम प्रभाव धरा-
तलदोलेम्मोडनेयाडुतलिप्प नम्मप्प।"

(भगवान चेतन एव अचेतन वस्तुओ से विलक्षण हे। नूतन से नूतन, सुन्दर से सुन्दर तथा उसके रसरूपी हे। समस्त नये नये भव्य रूपो के सृजनकर्ता अप्रतिमप्रभाववाले हरि धरातल में समस्त जीवियों के साथ पिता अपने बच्चो के साथ खेलते हुए से खेल रहे हे।)

आ) भगवान की व्याप्ति —

"परिमलवु सुमनदोलगनलनलनुमरणियलिप्पंते
दामोदरनु ब्रह्मादिगल मनदलि तोरि तोरदले
शृतिह जगन्नाथ विठलन करुण पडेय मुमुक्षु
जीवरु परम भगवतरनु कोडाडुवुदु प्रतिदिनवु॥

(विष्णु भगवान, जगन्नाथ, विठ्ठल दामोदर हे। वे ब्रह्मादि जीवराशियो के मन में उसी प्रकार रहकर भी अप्रकट रूप से विद्यमान हे जैसे फूलों में परिमल और अरणी में अग्नि उपस्थित होकर भी आंखो को नही दिखाई देते।

इ) नामस्मरण की महिमा:—

"मक्कलाडिसुवाग मडदिमोलक्करादि नलिवाग
हयपल्लविक गज मोदलाद।
वाहनवेरि मेरेवाग बिक्कुवागाकलिसुतलि देवकि
तनयन नेनेयुतिह नर।
सिक्कनवनेमदूतरिसे आवावल्लि नोडिदरु॥"

(बच्चो से खेलते समय, औरत से सरस वार्तालाप करते समय, घोडे, हाथी, पालकी आदि पर बैठकर अधिकार करते समय, उबसी लेते समय देवकी पुत्र को कोई याद करता कहेगा तो वह यम के दूतो के वश में कभी नहीं फंस सकता।)

अकबर के दरबार में गगाभट्टटौडरमल, बीरबल आदि कविगण पर अष्टछाप की वैष्णव भक्ति का प्रभाव पडा था। रसखान मुसलमान होकर भी कृष्ण के प्रेम में विरक्त होकर विट्ठलनाथ के शिष्य बन गये थे। उनसे रचित भक्त एवं प्रेम से भरे मुक्तक काव्यो के नाम प्रेमवाटिका तथा सुजान रसखान है। उनका जीवन काल सन् १६८८ से १७५८ माना जाता है। उनके भक्तिपूर्ण दो नमूने देखिए·

अ) प्रेमअगम अनुपम अमित सागर सरिस
बखान।
जो आवत एहि ढिग बहुरि जात नहीं रसखान

आ) या लकुटी अरु कामरिया पर राजतिहूँ
पुर को तजि डारो।
आठहुं सिद्ध नवों निधि को सुख नन्द की गाई
चराई बिसारो।
रसखानि कबै इन आँखिन सो व्रज के बन
बाग तडाग निहारो।
कोटिनहूँ कलधोत के धाम करील के कुंजन
ऊपर वारो।

रहीम दूसरे मुसल्मान कृष्णभक्त हे। वे गोस्वामी तुलसीदास के मित्र थे। उनसे रचित रासपचाध्यायी, मदनाष्टक आदि में कवि की वैष्णव भक्ति लक्षित होती है। उनके दो भक्ति पूर्ण पद नीचे उदाहरण के रूप में दिये गये हे।

अ) तें रहीम मन आपुनो की चारुचकोर।
निसिवासर लाग्य रहे कृष्णचन्द्र की क्षोर॥

आ) "जिहि रहीम चित अपनो कीन्ही चतुर
चकोर।
निशि वासर लागो रहे कृष्णचन्द्र की ओर
को रहीम पर द्वार पर जात न जिय पछितात
संपति के सब जात है विति सबहि लेजात।"

[सशेष]

कुलशेखरालवार

श्री के. एन. वरदराजन्, एम. ए.,
कल्पाकम्।

कुलशेखर की जय हो जय हो
नरपतिरत्न की जय हो जय हो
विष्णुभक्त की जय हो जय हो
चेर राज की जय हो जय हो।
वञ्चिकलम में जन्मलिया था
वञ्चकगण को अच्छाकिया था
शास्त्र के अनुसार शासनकिया था
हरि का पूजन तू ने किया था।
शिकार करना छोड दिया था
प्रजा से समुचित लगान लिया था
गरीबी का नाम किसी ने न सुना
सुरा का नाम किसी ने न लिया।
उसके राज्य में क्रान्ति नहीं थी
सब जगह मंदिर पंक्ति रही थी
वेदों का पठन विप्र करते थे
उनका अनुकरण शुक करते थे।
हरिभ कनों के सपूजन में
सतकुलशेखर तो दिन में
रात को भजन से बिताता था वह
उस से बिलकुल डरताथा मोह।
अधिकारी ने नृप को सुनाया
"विप्रों ने चन्द्रहार चुराया'
क्रुद्ध नरेशने यही कहा तब
"वैष्णव ऐसा काम न करेंगे।"
इस को साबित करने नरेश ने
साँप के कुभ में हाथ लगाया
नहीं डसा तब उनको साँपने
उस को देखकर जनहर्षाया।
पेरुमाल तिरुमोलि की स्वञ्चना की
पेरुमालपद पर शरणांगति की
दीनों, दलितों की रक्षा की
विष्णु के भक्तों की सेवा की।

ति. ति. देवस्थान के विविध - मन्दिरों में अर्जित सेवाओं की दरें तथा कुछ नियम निम्नलिखित रूप से परिवर्तित की गयीं।

श्री पद्मावती देवी का मन्दिर, तिरुचानूर.

अर्चना	रु १–००
आरती	रु ०–५०

श्री गोविन्दराज स्वामी मन्दिर, तिरुपति.

तोमाल सेवा	रु ४–००	(एक टिकट)
अर्चना	रु ४–००	,,
एकांतसेवा	रु ४–००	,,
विशेष दर्शन	रु २–००	,,

श्री बालाजी का मन्दिर, तिरुमल.

तिरुमल पर विराजमान श्री बालाजी के मन्दिर में अब तक रु २००/- चुकाकर मनानेवाली आर्जित सेवा में भाग लेने केलिए २ व्यक्तियों को प्रवेश है।

ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

(पृष्ठ २३ का शेष)

सूर:

ज्यौं सौरभ मृग नाभि बसत है।
द्रुम तृन सूँघि फिर्यौ ॥

श्रीमद् भगवद्गीता:

(१) सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो
(२) ईश्वरः सर्व भूतानां हृद्देशोऽर्जुन तिष्ठति।

यह स्मरणीय है कि ये सब अनुभव योग तक ही सीमित नहीं है। ये अनुभव उन भक्तो को भी उपलब्ध होते है जो भाव पूर्ण हृदय से भगवान के नाम पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं।

परम ज्योति दर्शन:

साक्षात्कारी पुरुष और संत परमात्मा का निरूपण परम ज्योति के रूप में करते हैं (ज्योतिषामपि तज्ज्योतिः) जिसका तेज कोटि सूर्य की प्रभा के समान होता है (कोटि सूर्य सम प्रभा) एकनाथ ने इसी प्रकार परमात्मा का वर्णन परम ज्योति के रूप में किया है। उनका कहना है (ए. भा. iii-635)

यह तेज शरीर को उसी तरह प्रकाशित करता है जिस तरह दीपक घर को प्रकाशित करता है। इस ज्योति को वह जीव-ज्योति अथवा अणु-जीव कला की संज्ञा देते हैं। यह प्रकाश शरीर के अन्दर-बाहर व्याप्त है और अत्यन्त सूक्ष्म तथा अतीन्द्रिय है।

(ए भा xxvii 193)

एकनाथ ने उस तेजोपुंज दीप का भी वर्णन किया है जो भगवान के परम तेज से प्रकाशित है। यह केवल रूपक नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस में एकनाथ के वास्तविक आध्यात्मिक अनुभव का वर्णन है।

उद्धव कहते हैं ज्यों ही यह दीपक कान के द्वार पर रखा गया, शरीर अन्दर-बाहर प्रकाशित हो गया तथा उसने तत्क्षण अविद्या के अंधकार को नष्ट कर दिया। हे भगवान्! इस सर्व व्यापी तेज ने मुझे आपकी महिमा और शक्ति का भान कराया तथा मैं तद्रूप हो गया। हे प्रभो! यह सब आपकी कृपा कटाक्ष का ही फल है।

(ए भा. xxix 690-92-93)

एकनाथ ने जिस परमज्योति के दर्शन किए उसका ललित चित्रण उन्हें स्वरचित मंगल आरती में किया है जिस का भाव नीचे दिया गया है।

भगवान की मंगल-आरती करते हुए श्री एकनाथ महाराज कहते हैं

मंगल आरति श्री नारायण जी की ॥टे॥
परम ज्योति से सब जग जागे,
कोटि सूर्य सम है तब आभा।
दसो दिशाएँ आलोकित हैं?
पूर रही नभ में तब शोभा।
ज्योति तिहारी त्रिभुवन व्यापी,
सदा आनंदित भक्त हुलासी।
दर्शन कर इस परम ज्योति का,
कूद पड़ा मैं सहज समाधी।

(पद्यानुवाद)

अनाहत-नाद श्रवण:—

यह आध्यात्मिक नाद है जो साधकों को अपनी साधना में सुनाई पड़ता है। यह नाद बिना टंकार के उत्पन्न होता है अत इसे अनाहत (अन+आहत) कहते हैं: हंसोपनिषद में अनाहतनाद के दस प्रकार बताए हैं।

नादो दशविधो जायते। चिणि, चिंचिणि घंटा, शंख।
तंत्री, ताल, वेणु, मृदंग, भेरी, मेघ॥

यथा,

छोटे घूंघरू, छोटे घटा, बडे घटा, शख, तंबूरा।
टाल, मुरली, मृदग, नगाडा और मेघ का नाद॥

छोटे घूघरू, छोटे घंटा, बड़े घंटे, शंख, तंबूरा, टाल, मुरली, मृदग, नगाड़ा और मेघ का नाद

इन नादो का वर्णन कबीर के पदो और श्री एकनाथ श्री रचना में मिलता है।

इन नादों के सुनने से मोक्ष का सुख प्राप्त होता है। अत हमें इन्हें सुनने में मग्न हो जाना चाहिए और नीरव शान्ति का आनन्द उठाना चाहिए।

यह आध्यात्मिक नाद बहुत ही महत्त्व का आध्यात्मिक अनुभव है। यह साधक को भगवान के ध्यान में मग्न होने में महत्त्व का साधन है। हिन्दी संत जिस के लिए 'अनाहत' शब्द का प्रयोग करते है, मराठी संत उसे 'अनुहात' कहते हैं।

(ए. भा xii 9-10)

अमृत रसास्वादन:

एकनाथ महाराज कहते है "अनाहत नाद के होने से सहस्र दल कमल (मस्तिष्क की कोषाओं में) से मधुरस का स्राव होने लगता है। यह स्वानंद जीवन का रस है। इसके प्रभाव से हृदय की सब वेदनाएं शान्त हो जाती है और सब इन्द्रियाँ सुखोप भोग करती हैं तथा आनंद से भर्पू हो जाती है"

एकनाथ ने यह भी बताया है कि यह अमृत रस की किस तरह से मस्तिष्क के पार्श्विक निलय (Ventricle) में सहस्रदल कमल से बहकर आता है।

(ए. भा. xix 450-451)

कबीर का कहना है कि ये आध्यात्मिक अनुभव साधक की दीर्घ कालीन पिपासा को शान्त कर देते हैं और उसे अमरत्व प्रदान करते हैं:

रस गगन गुफा में अजर झरे।
बिन बाजा झनकार उठे जहाँ॥

श्री एकनाथ ने इस आध्यात्मिक अमृत रस का जो वर्णन किया है वह अधिक स्पष्ट है।

विविधरूप दर्शन:

श्री एकनाथ ने कुछ आध्यात्मिक स्वरूपों का वर्णन किया है। उन्होने मोती और हंस तथा नेत्रों का वर्णन किया है जो सब दिशाओ में दृष्टि होती है। उन्हें अपने गुरु जनार्दन, विष्णु, कृष्ण और आत्म स्वरूप स्वरूप का दर्शन हुआ तथा सर्वत्र जनार्दन के दर्शन हुए।

वे कहते है कि भगवान ने लीला हेतु अत्यन्त मनोहर कोमल स्वरूप धारण कर लिया है। उनका नील वर्ण आकर्षक स्वरूप वास्तव में आत्मा का मानवीकरण है।

(ए. भा. xiii-7) (ए भा. xxi-20)
ए भा xxi-21)

धन्य है श्री हरी का मुखारविन्द जिसको देख कर मेरे नेत्र प्रफुल्लित होते है। इससे जो आनंद प्राप्त होता है। वह अमृत पान से भी अधिक है।

(ए. भा. xxiv-251-256)

जनार्दन के दर्शन:

जिसका ऐसा निश्चय है कि मे तथा यह संपूर्ण जगत् जनार्दन श्री हरि ही है उनसे भिन्न कोई भी कार्य-कारण वर्ग नहीं है, उस पुरुष को फिर सांसारिक राग-द्वेषादि द्वन्द्व रूप रोग नहीं होते।

"अहं हरि:सर्वमिद जनार्दनो
यान्यत्ततः कारण कार्य जातम्।
ईदृग्मनो यस्य न तस्य भूयो
भवोद्भवा द्वन्द्व गदा भवन्ति ॥"

(श्वेताश्वतरोपनिषद् १-२२-८७)

श्री कृष्ण दर्शन:—

मानस पूजा के समय हमें अपनी इच्छानु [illegible] भगवान के उस रूप का ध्यान करना [illegible] जिस से हमें परम प्रेम हो।

एकनाथ महाराज मानस पूजा का वर्णन करते हुए लिखते हैं:

"मान लो कि भगवान हमारे हृदय-कमल पर बैठे है। उनके सुन्दर स्वरूप पर अपनी अन्तर्दृष्टि केन्द्रित करने का प्रयत्न करो और दीर्घकाल तक एकाग्रता से देखते रहो। ऐसा ध्यान करो कि प्रभु हमें मुस्कराते हुए देख रहे है। उनकी मनोहारी मुस्कान से उनका आनन प्रफुल्लित है। इसके बाद हमें उनकी मुस्कराहट पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए और तब उस मुस्कराहट से जो आनंद प्राप्त होता है उस में मग्न हो जाना चाहिए। ऐसा करने से समय पाकर हम परमानन्द का अनुभव करेंगे।

(ए. भा xiv-465-472-503-510)

उपर्युक्त इस वर्णन को एकनाथ के साक्षात्कार का कथन ही समझना चाहिए। इसी प्रकार का वर्णन संत ज्ञानेश्वर ने अपने एक मनोहारी अभंग में किया है।
जिसका भावार्थ यह है

कोटि सूर्य की प्रभा सम
देदीप्य मान है तब आनन।
नील कमल नेत्रों और मधुर मुस्कान ने
मोहि लिया है मेरा मन ॥

हे कृष्ण! हे प्रियतम! आगे बढो
सहर्ष हृदय से लगाओ मुझे।
प्रेम से घंटों बतराओ
प्रसन्न करने को मुझे ॥

अहा! मेरी पुकार सुनकर
प्यारे कृष्ण ने पसारे अपनी भुजाओं को।
मानो इंगित करते हैं
मुझे हृदय लगाने को ॥

वे तो पुत्र वत्सल पिता ही हैं हमारे
शंका न करो मन में आगे बढने को।
वे जब हमें हृदय से लगाएँगे
मिट जाएँगे सब दु:ख-द्वन्द्व हमारे
सदा को ॥

(पद्यानुवाद)

स्वरूप दर्शन:

स्वरूप दर्शन अथवा आत्म-रूप दर्शन साक्षात्कार की परम सीमा है। साधक को आत्मा के दर्शन होते है। इस आत्म दर्शन के बाद ही आत्मा और परमात्मा के एकत्व की प्रतिष्ठा होती है।

श्वेताश्वतरोपनिषद में इस बात का निरूपण किया गया है:

जिस प्रकार मलिन दर्पण में अपना रूप नहीं देखा जा सकता, उसी प्रकार जिसका अन्तःकरण शुद्ध (वासनारहित) नहीं है वह आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की योग्यता नहीं रखता।

"मलिनो हि यथा दर्शो रूपा लोकस्य न क्षमः
तथा विपक्व करण आत्म ज्ञानस्य न क्षमः"

(याज्ञ. यति धर्म १४२)

जिस प्रकार दीपक की सहायता से मनुष्य वस्तु को देखता है उसी प्रकार वह आत्मा की सहायता से परमात्मा के दर्शन करता है जो अजन्मा और परात्पर है। अतः आध्यात्मिक

अनुभव की परम सीमा पर पहुंचने पर साधक परम ज्योति में अपना ही रूप देखता है ।

यह आध्यात्मिक अनुभव संसार के सन्तों में समान रूप से पाया जाता है

एक हिन्दी सन्त का कहना है:

हमारे हृदय में एक दर्पण है, परन्तु इस में अपने मुख को तब तक नहीं देख सकते जब तक कि द्वैत का भाव नाश न हो जाए ।"

ज्ञानेश्वर कहते हैं:

"साधारण दर्पण में अपना मुख देखने का कोई मूल्य नहीं । जब हम हृदय के दर्पण में अपना मुख देखने में समर्थ होते हैं तब ही यह कहा जा सकता है कि हम परमात्मा के सान्निध्य में पहुंच गए हैं ।"

श्री एकनाथ ने समाधि की अवस्था का वर्णन करते हुए इस प्रसंग में 'स्वरूप' का सरसरी ज़िक्र किया है:

"जब हमें अपनी आत्मा के दैवी रूप का एकाएक दर्शन होता है तो हम चकित होकर मंत्र मुग्ध हो जाते हैं और जब यह भावना शान्त हो जाती है तो हम समाधि की अवस्था को पहुँच जाते हैं ।"

(ए भा XIII-671-72)

परन्तु अपने ग्रंथ 'स्वात्म-सुख' में उन्होने स्वरूप दर्शन का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है

"जब आकाश का दर्पण हमारे सामने रखा जाता है तो उसमें अपना मुख देखना कौन न चाहेगा? जब हम इस में देखेंगे तो हमे स्वरूप के दर्शन होंगे । यदि हम उस में देखना भूल भी जाएँ तो भी हमें स्वरूप दर्शन होगा । यदि इस दर्पण से हम मुँह मोड ले अथवा आँखें बन्द कर लें तो भी दर्शन होता ही रहेगा तथा आँखें बन्द करने पर इसका रूप अधिक स्पष्ट हो जाएगा । इस अवस्था को पहुँचने पर शरीर का भ्रम अपने आप नष्ट हो जाएगा ।"

(स्वा:सु 62-63-64)

परमानंद का अनुभव:—

जब हमारे मन को आत्म दर्शन के आनन्द का रसास्वाद मिल जाता है तो वह इसको कभी नहीं छोड़ता बरन् इस आत्मानन्द के सागर में बार-बार डुबकी लेने की इच्छा रखता है । जब वह इस आनन्द सागर से बाहर निकल कर देखता है तो भी उसे आत्म दर्शन का मान होता ही रहता है । साधक जिधर देखता है उधर आत्म-दर्शन करता है । "सर्वं खल्विदम् ब्रह्म ।"

एकनाथ पुन: कहते हैं:

भगवान को अपना भक्त प्रिय है । वे उसकी रक्षा के लिए सर्वत्र सदा तत्पर रहते हैं ।

(ए. भा II-724)

जब हृदय में एक बार भगवान के दर्शन हो जाते हैं तो यह दर्शन हृदय तक ही सीमित नहीं रहता वरन् साधक को विश्व के सब रूपो में भगवान का दर्शन होता है ।

(ए. भा. XX-374)

एकनाथ कहते है कि भगवान को अपने अनन्य भक्त से परम प्रेम हो जाता है । अपने भक्त के कीर्तन को सुनकर भगवान मुग्ध होकर गर्दन हिलाते हैं और उसके साथ नाचते है । यह भी उच्च कोटि का आध्यात्मिक अनुभव है।

तुकाराम ने भी इसी प्रकार का दर्शन किया है:

संगमरमर से निर्मित श्री भवानी देवी फोटो : के सीताराम, कोयंबत्तूर.

"जब भक्त सोते समय भगवान का यश-गान करता है, भगवान उसके सामने आकर खड़े हो जाते हैं। यदि वह बैठ कर कीर्तन करता है, भगवान उस कीर्तन की सराहना के लिए अपनी गर्दन हिलाते हैं और जब भक्त खड़े होकर भगवान की कीर्ति वखाता है तो गोविन्द उसके सामने नृत्य करने लगते हैं। जब भक्त चलते हुए प्रभु के गौरव का वर्णन करता है तो भगवान भक्त के आगे-पीछे चलते हैं। संत नामदेव, सूरदास, पुरन्दरदास, जगन्नाथ दास आदि ने इसी प्रकार के अनुभवों को अपने अभगों और पदों में वर्णन किया है।

सूरदास अपने एक पद "देखो हरी को एक सुभाव" में जन मन को सचेत करने केलिए कहते हैं:

भगवत विरह कातर करुणामय
  डोलत पाछे लागे।
सूरदास ऐसे प्रभु को
  कल दीनत पीढि अभागे ॥

भगवान अत्यन्त करुणामय हैं। वे भक्त की विरह वेदना को सह नहीं सकते अतः उसकी रक्षा के लिए उसके पीछे-पीछे चलते हैं। सूरदास कहते हैं: अरे अभागे! ऐसे दीन दयाल प्रभु को तू क्यो पीठ दिखा रहा है।

ब्रह्म-स्थिति:—

ध्यान साधक को आत्मा का दर्शन कराता है जो परमानद परिपूर्ण है। इसके बाद साधक भगवान से सायुज्य प्राप्त कर लेता है और जीवात्मा भाव से भुक्त हो जाता है। जीव और शिव के एकत्व के पूर्व का परमानंद धीरे-धीरे विलीन हो जाता है। इस अवस्था में आत्मा इस सुख को आत्म सात कर लेती है तथा परम शान्ति के उच्च पर पर पहुँच जाती है। परम शान्ति की इस निरंहकार अवस्था को भी एकनाथ ने सहज समाधि की संज्ञा दी है।

(ए. भा. XIV–513–514–515)

जब योगी स्वरूप स्थिति के पद पर पहुंच जाता है तो उसका शरीर प्रारब्धानुसार सब कार्य मत्र के समान करता हुआ दिखाई देता है। उसकी जीव-शिव की एकता का सूत्र छिन्न नहीं होता। पूर्ण योगी सदा आत्मानुभव में मग्न रहता है। यही वास्तविक ब्रह्म-स्थिति है।

(ए. भा. XIII–703–5–10)

तंत्रवाद के आलोक में 'भक्ति' का स्वरूप

(मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के साक्ष्य पर)

डा० राममूर्ति त्रिपाठी

(क) चिच्छक्तिवाद ही तंत्रवाद है

"तन्त्र" अथवा "आगम" मूलक चिन्तन-धारा की "निगम" मूलक चिन्तनधारा से व्यावर्त्तक या भेदक विशेषता है—"चिच्छक्ति" की धारणा। बात यह है कि निगम मूलक चिन्तनधारा जिन छह उपधाराओं—न्याय, वैशेषिक सांख्य, पातंजल, पूर्व तथा उत्तर मीमांसा में प्रवाहित है उनमें से किसी में भी इस 'चिच्छक्ति' तत्त्व का उल्लेख नहीं मिलता। न्याय और वैशेषक ने जिन मूल पदार्थो का उल्लेख या परिगणन किया है, उनमें 'शक्ति' नामक पदार्थ का अस्तित्व ही नहीं है। 'कारणता' में 'शक्ति' का अन्तर्भाव मान लेना परवर्ती चिन्तको की उद्भावना हो सकती है, पर उससे जो कुछ मै कहना चाहता हूँ उसका कुछ बनता-बिगडता नहीं है। मीमांसा 'शक्ति' नामक पदार्थ का अस्तित्व अवश्य मानती है, पर उसे 'जड़ात्मिका' कहती है। शाकर अद्वैत-वेदान्त 'माया' नाम को जिस शक्ति की बात करता है, वह 'ज्ञाननिवर्त्य' सान्त तथा अंततः मिथ्या ही है। साख्य तथा पातंजल-दर्शन में 'प्रतिक्षण परिणामिनो हि भावाः ऋते चिति शक्तेः' अथवा 'चितिशक्ति-परिणामिनी' द्वारा यद्यपि चितिशक्ति की बात कही गई है, तथापि वह 'पुरुष' अथवा अद्वैत वेदान्त में 'ब्रह्म' के अर्थ में प्रयुक्त है—उसकी 'निजाशक्ति' के रूप में नहीं। आगम 'चरम-तत्त्व' या 'चित्' की निजाशक्ति के रूप में 'चित्शक्ति' की धारणा रखता है। यह 'चित्' और उसकी 'चिच्छक्ति' में चन्द्र और चन्द्रिका की भाति तादात्म्य मानता है। आगम इन्हें 'दो' मानते हुए भी तत्त्वतः 'एक' मानते हैं—अभिन्न मानते हैं। इसके लिए वे लोग एक दृष्टान्त देते हैं—वृषभाश्वन्याय का। कुशल चित्रकार जिस प्रकार एक ही रेखा में दृष्टि-भेद से 'वृषभ' और 'अश्व' का आकार उभार देता है, पर रेखा एक ही रहती है, उसी प्रकार आगमिक स्वप्रतिपाद्य चरमतत्त्व में दृष्टि-भेद से दो रूप उभार देते हैं—चित् और चित्शक्ति। पहला निःस्पद है और दूसरा स्पंदात्मक, पहला ऋणात्मक है और दूसरा धनात्मक, पहला नि.स्तब्ध शान्त समुद्र है—दूसरा तरंगायमाण। उपनिषदें जब कहती हैं—तदेजति, तन्नेजति—तब इसी ओर सकेत करती है, जिसका आगमिक चिन्ताधारा में पर्याप्त पल्लवन हुआ है। सष्टि की दृष्टि से देखने पर जो 'स्पंदात्मक' प्रतीत होता है, प्रलय की दृष्टि से देखने पर वह 'निःस्पद' लगता है। किसी दृष्टि से न देखें तब न उसे 'सस्पंद' कहा जा सकता है और न ही निःष्पद। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि वह कुछ है ही नहीं। नहीं, उसे 'सत्' तो कहना पड़ेगा। ऐसा 'सत्' जो स्वप्रकाश होने से 'चित्' है और सर्वतः पूर्ण होने से 'आनन्द'। सत्य के ये दोनो ही पक्ष हैं। यह ऐसा 'सत्' है जिसमें सभी 'असत्' भी है—यह ऐसा 'है' है जिसमें सभी 'नहीं' विद्यमान हैं। उसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो न हो— तभी तो वह 'पूर्ण' है, अन्यथा 'अपूर्ण' नहीं ही जायगा। फिर उसमें जो है नहीं, वह आ कहां से जायगा? आगमिक मानते है कि यह समस्त ज्ञान-ज्ञेयात्मक जगत् स्वाधिष्ठान को छोड़कर गत्यात्मक है। ज्ञान या चेतना एक प्रकार का स्नायविक धक्का है और ज्ञेय परमाणु-पुञ्ज भी अन्ततः गत्यात्मक ही है। परमाणु भी एक जगत् है—वहां भी स्पदन है। इलेक्ट्रान के भीतर भी हलचल है। ऊर्मिविज्ञान ने इलेक्ट्रान की भीतरी बनावट तक को देखने का प्रयास किया है—वहाँ भी हलचल है। मतलब यह कि जो चलता है, हिलता-डुलता है, सस्पद है—वह जगत् है। अणु हिलता-डुलता है, अतः वह जगत् है, इलेक्ट्रान हिलता-डुलता है—अतः वह भी जगत है, व्योमांश (Ether element) भी चलता है, अतः वह भी जगत् है। निष्कर्ष यह कि जगत् के मूल या मर्म की बात यही हिलने-डुलने का व्यापार है। जानना भी हिलने-डुलने (स्नायविक धक्का) का नाम है और जानने का विषय भी हिलने-डुलने का ही नाम है। इस प्रकार समस्त ज्ञान ज्ञेयात्मक जगत् स्पंदन ही है—हिलना-डुलना है। अर्थात् सारा जगत् स्पंदात्मक है। सृष्टि है तो स्पदात्मक, नहीं है तो नि.स्पद। बात यह है कि निस्पद के बिना हम 'स्पद' की कल्पना भी कैसे कर सकते हैं, 'स्थिति' के बिना 'गति' की धारण किस प्रकार हो सकेगी? और दोनो ही धारणाएँ सापेक्ष हैं--जो निरपेक्ष में 'समाहित' हैं। इसीलिए सृष्टि की दृष्टि से वह 'गति' है, प्रलय की दृष्टि से 'स्थिति', पर निरपेक्ष दृष्टि से न 'गति' न 'स्थिति'—फलतः वह उभयात्मक भी, है और अनुभयात्मक भी और इसीलिए सापेक्षार्थ प्रत्यायक शब्दो की सीमा से परे शब्दातीत भी। इसीलिए वह कहने में नहीं आता, केवल अनुभवैकगम्य है। फिर भी शाकर-अद्वैत से आगमिक अद्वैत का अर्थ भिन्न है। शांकर-अद्वैत में चरमतत्त्व स्वगत, सजातीय एवं विजातीय सर्वविध भेद अथवा 'द्वैत' से रहित है, जबकि आगम-सम्मत 'अद्वय' सभी 'द्वैत' को आत्मसात् किए हुए है—फिर भी 'अद्वय' है। शांकर-अद्वैत में समस्त 'द्वैत' का मूल मायाशक्ति को माना जाता है, जो अंततः ज्ञाननिवर्त्य है—वहाँ चरमतत्त्व निर्विशेष है। चूंकि चरमतत्त्व की चिन्मयी प्रकृति से दृश्यमान् द्वैत की प्रकृति भिन्न है—अतः 'अद्वैत' सिद्धि के लिए उसे निवर्त्य मानना ही पड़ेगा। विपरीत इसके आगमसम्मत 'अद्वय' में समस्त दृश्यमान स्पदात्मक जगत् चिच्छक्ति का ही परिणत रूप है और वह चिच्छक्ति 'निवर्त्य' नहीं, आत्मरूप में सहरणीय है। इसीलिए यहाँ समस्त द्वैत या जगत् को मिथ्या नहीं, सत् माना जाता है—फिर भी द्वैतवाद नहीं। कारण, सब कुछ चित् की आत्मशक्ति का ही सार परिणाम है। मायूराण्डरस न्याय से समस्त दृश्यमान् वैचित्र्य मूल में मायूराण्डद्रव पदार्थ की भाँति समस्त वैचित्र्यात्मक संभावनाओं को आत्मसात करता हुआ भी एक रस और अखण्ड प्रतीत होता है। चित् की इस आत्मशक्ति का स्वभाव है—स्पंदनशीलता-संकोचप्रसारात्मिकता।

'सकोच-प्रसार' उसका स्वभाव है। अभिनवगुप्त ने बताया है कि जिस प्रकार वड़वा 'विसर्ग' काल में अपने वराग का 'संकोच-प्रसार' करती हुई आनन्द विशेष का अनुभव करती है, उसी प्रकार चित भी अपनी संकोच-प्रसारस्वभावात्मिका शक्ति से निरन्तर आनन्दमय रहता है—सृष्टि-प्रलय करता रहता है। यहाँ सृष्टि स्थितिप्रलय, ससारिता और असंसारिता स्वातत्र्य शक्ति का विलास है। यहाँ परमशिव की पचकृत्यकारिता सोपाधिक नहीं, निरुपाधिक है। अस्तु। यह चिच्छक्तिवाद ही तत्रवाद है।

(ख) आगमिक प्रवाह का पुरातनता

'आब्सुक्योर रिलीजस काल्ट्स" के लेखक डॉ० शशिभूषण दास गुप्त की धारणा है कि समानान्तर रूप से प्रवाहित होने वाले धार्मिक विचार और आचार की प्रक्रिया के साथ भारतवर्ष में भीतर-ही-भीतर एक रहस्यमय यौगिक साधना (Esoteric yogic process) चल रही थी, जो सभबत काफी पुरानी है। इस रहस्यमय यौगिक साधना का, जिसमें शक्ति का ही साधना प्रमुख थी—जब शैवो और शाक्तों की धार्मिक चिन्तनाओ और प्रक्रियाओ से सम्पर्क हुआ, तब शैव और शाक्ततत्र अस्तित्व में आए; जब बौद्ध-विचार और आचार से सम्पर्क हुआ तब बौद्धतंत्रवाद और जब वैष्णव विचार-आचार से सम्पर्क हुआ तब वैष्णव तंत्रवाद अस्तित्व में आया। इस प्रकार सभी भारतीय तात्रिक रहस्यवादी साधनाओं की पृष्ठभूमि का मूलस्रोत एक ही है। अभिप्राय यह कि 'आगम' या 'तत्र' समझे जाने वाले समस्त वाङ्मय या धाराओ की पहली और प्रमुख व्यावर्त्तक विशेषता जो अनागमिक चिन्तन-धारा से इसे पृथक् करती है—'वह है शक्ति की विशिष्ट संस्थिति'।

(ग) मध्यकाल का स्वर—"प्रेमा पुमार्थो महान्"

मध्यकालीन तमाम साधनाओ और साहित्य, खासकर हिन्दी साहित्य के साक्ष्य पर जैसा कि हम आगे विस्तार से विचार करेंगे—यह स्पष्ट है कि यही 'शक्ति' भक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुई। वैदिक वाङ्मय के सहिता तथा ब्राह्मण-भाग मे जहाँ 'भक्ति' शब्द मिलता है, निरुक्तकार तथा अन्यो ने उसे 'भाग' अर्थ में प्रयुक्त बताया है। कविराज जी की तो धारणा है कि ज्ञानकाण्ड वैराग्यमूलक ज्ञान पर बल देता है, अतः वहाँ वासनात्मक भावरूपा-भक्ति का होना संभव ही नहीं है। कर्मकाण्ड में 'कर्म' ही सब कुछ है। उपासनाकाण्ड में भी 'भक्ति' का वह रूप नहीं मिलता, जो मध्यकालीन 'राग' साधना का है। असल में मध्यकालीन साधनाएँ 'राग' शोधन पर बल देती है, 'राग' दमन पर नहीं। वहाँ 'राग' का उदात्तीकरण होता है और अंततः वह रागात्मिका साध्यरूपा भक्ति आत्मशक्ति से अभिन्न हो जाती है—अपने इसी रूप में वह साध्य है। अपने साध्यरूप में 'भक्ति' अत करण की वृत्तिविशेष नहीं है, अपितु आत्मशक्ति—ह्लादिनी की वृत्ति है। स्वामिवर्य करपात्री जी ने अपने भक्ति-रसार्णव में कहा है—"यद्यपि भक्तिः आह्लादिनी शक्तिरूपा नित्याबिम्बी च, तथापि" साश्रवणजनितवृत्तावेवाभिव्यज्यते—इति तदर्थं वृत्तिरपेक्षिता।" "भक्ति अपने साध्यरूप मे ह्लादिनी शक्ति रूपा है, अतएव वह नित्य और विभु है तथापि उसके प्रकाश के लिए वृत्ति को अपेक्षा है"—इसीलिए 'हरिभक्ति रसायन' कार ने "भगवदाकारान्तःकरणवृत्ति" रूप कहा है।

इस भक्ति का चरम परिणत रूप 'माधुर्य-भाव' है—प्रेम है। मध्यकालीन साधको ने 'प्रेमा पुमर्थो महान्' पर ही अपने को केन्द्रित किया और क्रमागत चार पुरुषार्थों की जगह 'प्रेम' को पञ्चमपुरुषार्थ के रूप में प्रतिष्ठा की और 'भक्ति' को मुक्ति की अपेक्षा काम्य माना। यह भक्ति एक 'भाव' है—चित्त का भावमय प्रकाश है जिसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म तथा संगत विचार आगमों में मिलता है। कहा जाता है कि महर्षि शाण्डिल्य को जब चारो वेदों में परमश्रेयस् नहीं मिला, तब पाञ्चरात्र का आश्रय लिया और परम तृप्ति प्राप्त की। शाण्डिल्य तथा नारद द्वारा विरचित भक्तिसूत्रों में भक्ति का ही प्रामुख्य है—वहाँ भक्ति ही निःश्रेयस् है। कहीं-कहीं तो अपराभक्ति पराभक्ति का कारण वैसे ही मानी गई है जैसे कच्चा आम पके आम का। वैष्णव-भक्ति का निरूपण इसी पाञ्चरात्रागम में हुआ है जहाँ लक्ष्मी और विष्णु का सामरस्य प्रतिपादित है।

(शेष पृष्ठ ३६ पर)

ग्राहकों से निवेदन

१. सप्तगिरि पत्रिका को प्राप्त करने केलिए नये तथा पुराने ग्राहकों को एक महीने के पूर्व ही मास के १५ वी तारीख के पहिले ही चदा रकम भेजना चाहिए। उदाहरणार्थ यदि आप जून मास से सप्तगिरि प्राप्त करना चाहें तो १५, मई के पूर्व ही चंदा रकम भेजें। उसके बाद भेजने वाले ग्राहकों को सुविधानुसार पत्रिका भेजी जायगी, निश्चित नहीं। उस महीने की पत्रिका के अभाव में अगले महीने से पत्रिका भेजी जायगी।

२ चंदा रकम कृपया सम्पादक, ति. ति. दे. प्रेस कम्पाउण्ड, तिरुपति के पते पर ही भेजें।

३. सप्तगिरि अथवा ति ति. देवस्थान के अन्य प्रकाशन सबधी विवरण केलिए कृपया निम्नलिखित पते पर ही पत्र व्यवहार करें :—

सम्पादक,
प्रकाशन विभाग,
ति. ति दे. प्रेस कम्पाउण्ड,
तिरुपति

(पृष्ठ ८ का शेष)

सुनकर ही राधिका अवसन्न हो जाती है। उसे जड़-जगम, सचर-अचर सभी उदासी से भरे हुए प्रतीत होते है—

"करूण ध्वनि कहाँ की फैल-सी क्यों गई है।
सब तरुमनमारे आज क्यों यों खड़े हैं।
अवनि अति-दुखी-सी क्यों हमें है दिखाती।
नभ-पर दुख-छाया-पात क्यों हो रहा है॥"

—प्रियप्रवास चतुर्थ-सर्ग

एक गोपी बाला आश्चर्य प्रकट करती है कि प्रेम-पथ में प्रेमियो को इतनी पीड़ा क्यो सहनी पड़ती है—

"क्यों होती हैं अहह इतनी यातना प्रेमिकों की।
क्यों बाधा औ विपदमय है प्रेम का पंथ होता।
जो प्यारा औ रुचिर-विटपी जीवनोद्यान का है।
सों क्यों तीखे कुटिल उभरे कटकों से भरा है॥"

—प्रियप्रवास (पञ्चदश सर्ग)

उसकी अभिलाषा है कि काश! यदि उसे पख होता तो वह उड़कर अपने प्रियतम श्याम के पास पहुँच जाती। विहग को आकाश में उड़ते हुए देख कर उसकी भावना वाणी के माध्यम से फूट पड़ती है—

"जो मै कोई विहग उडता देखती व्योम में हूँ।
तो उत्कण्ठा-विवश चित में आज भी सोचती हूँ।
होते मेरे अवन तन में पक्ष जो पक्षियों से।
तो यों ही मैं समुद उडती श्याम के पास जाती॥"

—षोडस सर्ग

प्रेम जब अतीव प्रगाढ हो जाता है तो प्रेमी को यत्र-तत्र-सर्वत्र, जड़-जगम, सचर-अचर सभी में अपने प्रियतम का दर्शन होने लगता है। एक गोपिका की उक्ति यहाँ द्रष्टव्य है—

"फूली संध्या परम-प्रिय की कान्ति-सी है दिखाती।
मै पाती हूँ रजनि-तन में श्याम का रंग छाया।
उषा आती प्रति-दिवस है प्रीति से रंजिता हो।
पाया जाता वर-वदन सा ओप आदित्य में है॥"

—षोडस सर्ग

प्रेम का यही विश्व-जनीन रूप हमें टेनिसन की कविता में दिखलाई पडता है—

"In solitudes
Her voice came to me through the whispering woods
And from the fountains and the odors deep of flowers
Which like lips murmuring in their sleep
And the sweet kisses which have lulled them there
Breathed but of her to the enamured care
And from the breezes whether low or loud
And the rain of every passing cloud
And from the singing of the summer birds
And from all sounds all silence"

प्रेम का उत्कट रूप तब प्रकट होता है जब आत्मा विश्वात्मा में मिल कर एक हो जाता है। प्रेमी के सभी क्रिया-कलाप अपने प्रियतम की प्रसन्नता को ध्यान मे रख कर होने लगते है। राधा का प्रेम अन्त में विश्व-प्रेम में बदल जाता है। वह सभी को अपना अपना कर्तव्य पालन करने का उपदेश देती है और इसी में कृष्ण के प्रति उनके सफल प्रेम की सार्थकता है—

"जी से जो आप सब करते प्यार प्राणेश को हैं।
तो पा भू में पुरुष-तन को, खिन्न होके न बैठें।
उद्योगी हो परम रुचि से कीजिये कार्य ऐसे।
जो प्यारे हैं परम-प्रिय के विश्व के प्रेमिकों के॥"

—सप्तदश सर्ग

पुस्तक के समापन में अन्त में कवि भगवान से यही प्रार्थना करता है कि कृष्ण और राधा जैसे स्नेही-जन ससार में बार बार जन्म लेते रहे—

"सच्चे स्नेही अवनिजन के देश के श्याम जैसे।
राधा जैसी सदय-हृदया विश्व-प्रेमानुरक्ता।
हे विश्वात्मा! भरत-भुव के अंक में और आवे।
ऐसी व्यापी विरह-घटना किन्तु कोई न होवे॥"

—सप्तदश सर्ग ★

ब्रह्मोत्सव के अवसर पर गरुडवाहन पर विराजमान श्री कोदडरामस्वामीजी की उत्सव मूर्ति

श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामीजी का मंदिर
नारायणवनम्, [ति. ति. देवस्थान]
दैनिक-कार्यक्रम

क्रम	सेवा	से	तक
१.	सुप्रभात	प्रातः ६-३० से	प्रातः ७-०० तक
२.	मंदिर के दर्वाजे खोलना	,, ७-००	
३.	विश्वरूप सर्वदर्शन	,, ७-०० से	,, ८-३० ,,
४.	तोमालसेवा	,, ८-३० ,,	,, ९-०० ,,
५	कोलुवु & अर्चना	,, ९-०० ,,	,, ९-३० ,,
६.	पहली घंटी, सात्तुमोरै	,, ९-३० ,,	,, १०-०० ,,
७.	सर्वदर्शन	,, १०-०० ,,	,, ११-३० ,,
८.	दूसरी घंटी अष्टोत्तरम् (एकांत)	,, ११-३० ,,	मध्याह्न १२-०० ,,
९.	तीर्मानम्	मध्याह्न १२-००	
१०.	मंदिर के दर्वाजे खोलना	शाम ४-००	
११.	सर्वदर्शन	,, ४-०० से	शाम ६-०० ,,
१२.	तोमाल सेवा & अर्चना	शाम ६-०० ,,	,, ६-३० ,,
१३.	रात का कैंकर्य तथा सात्तुमोरै	,, ६-३० ,,	रात ७-०० ,,
१४.	सर्वदर्शन	रात ७-०० ,,	,, ८-४५ ,,

अर्जित सेवाओं की दरें

क्रम	सेवा	दर
१.	अर्चना & अष्टोत्तरम्	रु. १-००
२.	हारति	रु. ०-२५
३.	नारियल फोड़ना	रु. ०-१०
४.	सहस्र नामार्चना	रु. ५-००
५	पूलंगि (गुरुवार)	रु. १-००
६.	अभिषेकानंतर दर्शन (शुक्रवार)	रु. १-००
७.	वाहनम् (वाहन वाहकों के किराये बिना)	रु. १५-००
८.	तिरुमोरै, तेल खर्च	रु २-५०

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

(पृष्ठ ३४ का शेष)

यहाँ वही आगमिक द्वयात्मक अद्वय मौजूद है। शाकर-अद्वैत की भाँति आगमिक। अद्वयवाद भक्ति भावना अथवा रससाधना के प्रतिकूल नहीं है, विपरीत इसके वह अनुकूल है, वहाँ द्वैत का त्याग नहीं, ग्रहण है।

अब तक के उपर्युक्त विवेचन का निष्कर्ष यह हुआ कि आगमों का वैशिष्ट्य 'चिन्मयी-शक्ति' की मान्यता में है, यही शक्ति भक्तों द्वारा 'भक्ति'–साध्यभक्ति के रूप में स्थापित हुई और 'प्रेमा पुमर्थो महान्' का उद्घोष करते हुए इसकी सर्वातिशायी पञ्चमपुरुषार्थ के रूप में कल्पना हुई।

भारतीय अध्यात्म साधना की समूची परम्परा पर दृष्टिपात करने के अनन्तर ऐसा लगता है कि यहाँ कुछ साधन या साधक का वर्ग ऐसा है जो 'वासना को समस्त क्लेश का मूल मानकर उसके उच्छेद ही में आत्मकल्याण देखता है और दूसरा वर्ग ऐसा है जो 'वासना के उच्छेद के बदले उसका दिव्यीकरण करता है और इसी में आत्मकल्याण मानता है। राग या वासना के दमन का मार्ग हीनयानी बौद्ध और तपस्वी जैन—अर्थात् 'श्रमण' साधना पकड़ती है, ज्ञानमार्गी वैदिक प्रवाह भी 'विक्षेप' जनक 'वासना' के समुच्छेद पर बल देता है, परन्तु आगम अथवा तंत्रों में ज्ञात या अज्ञात रूप से आस्था रखने वाले साधको ने 'राग' साधना को ही सहज साधना कहा है, उसके दमन को कृच्छ्र साधना बताया है। वास्तव में हर वस्तु के यहाँ दोनों पक्ष है—यह हमारे ऊपर है कि हम किस पक्ष से उस वस्तु का उपयोग करते हे। वही 'राग' जड़मुखी हो, तो आत्मघाती हो जाता है और चिन्मुख हो तो आत्मोद्धारक हो जाता है। मध्यकालीन साधको ने 'राग' शोधन का ही सहज मार्ग पकड़ा, रागदमन का कृच्छ्र मार्ग नहीं। इनकी धारणा थी कि पार्थिव शरीर की रागात्मिका वृत्ति आत्मशक्तिरूपा भक्ति की प्रतिच्छाया है—इसके माध्यम से उसे पाया जा सकता है।

(क्रमशः)

भक्तवत्सल श्री बालाजी

धारा सुब्रह्मण्यम्, विजयवाडा.

देश - विदेशों में आज भक्ति का प्रचार खूब हो रहा है। आधुनिक वैज्ञानिक युग में मानव बहुत अशांति से जीवन बिता रहा है। वह भ्रमवश जिसे सुख समझता है, वह अवास्तविक है। वही तो दुखों का मूलकारण है। उसके कारण ही वह भगवान को भूला जा रहा है। तथा दुनिया के विषयो में अपना तन - मन लीन कर रहा है, जिससे कि उसे दुःख ही भोगना पड रहा है। सच्चे अर्थ में मानव की इस दुख को दूर करके उसे परमात्मा से मिलाने का एक ही साधन "भक्ति" है। तभी उसे सच्चा सुख मिलता है और आत्मा का परमात्मा में लीन होना ही "मुक्ति या कैवल्य" कहलाता है। इसके लिए मुख्य साधन "भक्ति" ही है।

हर दिन नींद से उठकर फिर सोते समय तक मानव पापकार्य करता ही रहता है। इसलिए उसको प्रायश्चित करना पडता है। नहीं तो उसके द्वारा किये गये पापो का फल भोगना पडता है। वैसे तो कलियुग में पाप करनेवाले लोगो की सख्या ज्यादा बढ गयी। और इसलिए उन्हें ऐसे भगवान की आवश्यकता है, जो इन सभी पापों का प्रायश्चित करें और सभी को सुख प्रदान करें। अपने भक्त जनों को धर्म के रास्ते पर चलने का उपदेश दें और एक सच्चा रास्ता दिखायें जिससे वे अपना जीवन सुख-शांति के साथ बिता सकें। अत कहा गया है

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेक शरणव्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामिमाशुच ।

ऐसे ही है, हमारे भगवान भक्तवत्सल श्री बालाजी, जो अपने भक्तों के कष्टो को दूर करें। निश्चय ही वे अपने भक्तो को सुख और शांति प्रदान करें। इसलिए उनको भक्तवत्सल कहा गया है। और देश - विदेशो में भी इनका नाम मशहूर हो गया है।

भगवान का भूमि पर अवतरण :—

जब कभी भूमि पर अधर्म ज्यादा हो जाता है और धर्म का ह्लास हो जाता है तभी भगवान स्वयं वेषधारण करके भूमि पर अवतरण लेते है। श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि—

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानां सृजाम्यहम् ।।

इसके अलावा दुष्टों को शिक्षा देने के लिए तथा शिष्टो की रक्षा के लिए वे अवतार लेते है। यथा—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ।।

इस प्रकार दानव या दुष्टों को संहार करके सज्जन या शिष्ट लोगों की रक्षा करके धर्म का स्थापित करने का कर्तव्य को पहले से हो गया है। भगवान यह सब उनके अवतारों मे देख सकते है। वेदों की रक्षा केलिए मत्स्य, कूर्म, वराह, नारसिंह आदि अवतारों को डालना या रामावतार में दानवों का संहार व कृष्णावतार में अधर्म का अपजय यह सब हम देख सकते है। भक्त की पुकार या आर्तनाद पर तुरंत प्रत्यक्ष हो जाते हैं, और उनके कष्टों को दूर कर देते हैं। तब तक हम भगवान के मानव रूप धारण करना देख सकते है। श्री बालाजी की महिमा को बताते हुए सुप्रभात में कहा गया है —

मीनाकृते कमठ कोल नृसिंहवर्णन
स्वामिन् परश्वथतपोधनरामचन्द्र।
शेषांशराम यदुनंदन कल्किरूप
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

(क्रमशः)

हिन्दूधर्म प्रचार के गर्मी की पाठशाला का उद्‌घाटन :

ति. ति. देवस्थान के आध्वर्य में हिन्दू धर्म के प्रचार के लिए गार्मी भी पाठशाला का उदृघाटन तिरुमल में दि० ४-५-७९ को देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी, श्री पी० पी० आर० के० प्रसादजी ने किया है। उक्त सभा को केन्दीय सस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति के प्रिन्सिपाल श्री एम० ड़ी० बालसुब्रह्मण्यम् एम० ए० पी० एच० ड़ी ने अध्यक्षता की। दि० ४-५-७९ से ३१-५-७९ तक चलेगा। एक महीने की अवधि के इस कोर्स में ५० अध्यापकों की प्रशिक्षण दिया जायगा। उनके लिए मुक्त आवास, दर्शन तथा कम दरों पर योजन के साथ- रु. १००. के छात्रवृत्ति भी दिया जायगा।

इस कोर्स को पहले १९४७ में शुरु किया गया। दुर्भाग्यवश १९७६ में इसे रोक दिया गया। तीन साल के बाद अब के कार्य-निर्वहणाधिकारी श्री पी० वी० आर० के० प्रसाद जी ने चलाने की अनुज्ञा दी।

सदस्य ति. ति. देवस्थान से न्यास मण्डल के श्री चन्द्रशेकर नायडु, तिरुमल के उपकार्य-निर्वहणाधिकारी, श्री मुनिस्वामी नायुडु, हिन्दू धर्म प्रतिष्ठान संघ के मंत्री श्री अर्कसोमयाजी तथा अन्य देवस्थान के अधिकारी इस समारोह में भाग लिये।

श्री आर० कृष्णस्वामी अय्यंगार निदेशक के अनवरत प्रयास से इसका शुभारम्भ हुआ। यह तो अवश्य ही हिन्दू धर्म प्रचार के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

ताल्लपाक श्री अन्नमाचार्य के ५७१ वीं जयंतुत्सव :

ताल्लपाक अन्नमाचार्य के ५७१ की जयंतुत्सव दि० २२-५-७९ से २४-५-७९ तक अन्नमाचार्य कलामंदिर, तिरुपति में अतिवैभव से सम्पन्न हुए।

देवस्थान के कलाक्षेत्र के विशेषाधिकारी श्री बालांत्रपु रजनीकाता राव ने अध्यक्षता की। अन्नमाचार्य साहित्य को आस्तिक जनों तक पहुँचाने के लिए मूल पुरुष स्वर्गीय श्री वेटूरी प्रभाकर शास्त्री तथा राल्लपल्लि अनंत कृष्ण शर्मा के चित्रपटों को देवस्वान के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी० वी० आर० के० प्रसाद, आइ.ए.एस ने आवष्करण किया।

देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी अपने स्वागोतोपन्यास में अन्नमाचर्य की साहित्य प्रचार के बारे में विश्लेषण करते हुए, जल्दी में उनकी कीर्तनाओ के ग्रामफोन रिकार्ड आने को बताया। अभी संगीत रूपक जनाकर्षक हो गयी तो, इसको भी रिकार्ड के रूप में लाने की सभावना होगी। उन्ही के समकालिक श्री पुरंदरदास के साहित्य प्रचार के लिए एक विशेषाधिकारी तथा एक प्रणाली को बनाने का इन्तजाम किया गया।

सभाध्यक्ष श्री रजनीकांतारावजी ने अपने भाषण में कहा कि अन्नमाचार्य सगीत साहित्य में पारंगत है। अगर अन्नमाचार्य की कीर्तनाओ की रचना न होगी तो, देशीय बाणियो में प्रचार को खो जाना होगा। आन्ध्र काव्य साहित्य के लिए जिस प्रकार नन्नय्या आदि कवि है, उसी प्रकार गेय कविता रचना में अन्नमाचार्य है, उनकी गेय कविता में कुछ अभिनय प्रक्रिय भी गोचर होता है।

इस कार्यक्रम के मुख्यातिथि श्री गुंटूर शेषेन्द्र शर्मा अपने भाषण में नन्नय्या से लेकर आज तक अनुवाद साहित्य ही कहलाने वाले आन्ध्रसाहित्य में अन्नमाचार्य स्वतंत्र कविता रचनाओं के कारण एक निजी आन्ध्रकवि के रूप में अपने व्यक्तित्व तथा स्थान को बना रखा।

सर्वश्री शेषेन्द्र शर्मा, रजनीकांतारावजी की नूतन वस्त्रों से देवस्थन के कार्यनिर्वहणाधिकारी ने सन्मानित किया।

कुमारी शोभाराजु की वंदना-समर्पण से उस दिन की सभा का समाप्त हो गया। बाद को अन्नमाचर्य प्राजेक्ट से "अन्नमय्य कथा" के शब्द रूपक का प्रसार किया गया।

दूसरे दिन शाम को श्री संध्यावंदनं श्रीनिवास राव (गात्रं), श्री पुदुक्कोट्टी. आर. रामनाथन (वायोलिन), श्री येल्ला वेंकटेश्वर राव (मृदंग) से संगीत सभा का आयोजन हुई। बाद को श्री पी. बी. श्रीनिवासु, सिनी गायक से कीर्तनाओ का गान किया गया।

तीसरे दिन शाम को श्री वेंकटेश्वर विश्व-विद्यालय के आडिटोरियं में श्री पी. वी. आर. के. प्रसाद जी, कार्यनिर्वहणाधिकारी से सर्वश्री सध्यावंदनं श्रीनिवास राव (गात्रं), येल्ला वेंकटेश्वर राव (मृदगं), बापू (चित्रकला), डा० यामिनी कृष्णमूर्ति (नृत्य कला) के विशेष कलाकारो को देवस्थान के आस्थान विद्वान की उपाधि देकर सन्मानित किया। बाद को डा० यामिनी कृष्णमूर्तिजी से नृत्य प्रदर्शन हुआ।

आर्ष संस्कृति के प्रचार का कार्यक्रम :

आर्ष संस्कृति के प्रचार के लिए देवस्थान को मद्रास में और एक जगह मिला। दिनांक १९-४-७९ को लगभग रु. २० लाख के कीमत जयदाद तथा उस से सम्बन्धित वि. वि. आर. धर्मशाला को उस संस्था के मंत्री श्री रेबाल लक्ष्मी नरसारेड्डी ने देवस्थान को लाछनवर्वक सौंप दिया।

उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व राज्यपाल श्री बेजवाडा गोपालरेड्डी ने अध्यक्षता की। तमिलनाडु के मुख्य न्यायाधिपति श्री टी रामप्रसाद राव मुख्यातिथि ये।

देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी० वी० आर० के० प्रसाद, आई. ए. एस. ने इस कार्यक्रम के मुख्योद्देश्य के बारे में स्पष्ट किया।

देवस्थान ने धर्मशाला के सचिव श्री रेमाल लक्ष्मी नरसारेड्डी को, उनकी उत्तम सेवाओ के लिए डा० बेजवाडा गोपालरेड्डी के द्वारा स्वर्ण पतक देकर सन्मनित किया।

इस कार्यक्रम में न्यास मण्डल के अध्यक्ष डा० रमेशन और अन्य अधिकारी भाग लिये। और इस धर्मशाला के प्रांगण में डा० रमेशन के द्वारा आध्यान्मिक भाषणो का शुभारंभ किया गया। बाद को देवस्थान के समाचार केंद्र में कार्यक्रम का निर्वहण किया गया।

तिरुपति में हिन्दू धर्म प्रचार के गर्मी की पाठशाला :

दिनांक २६-५-७९ को तिरुपति में हिन्दू धर्म प्रचार के गर्मी की पाठशाला का आरम्भ हुआ। श्री बलराम रेड्डी अध्यक्ष थे। श्री पी वी. आर के प्रसादजी, कार्यनिर्वहणाधिकारी ने इस कोर्स का उद्‌घाटन किया।

अध्यक्ष ने अपने भाषण में कहा कि सभी मतों की समान रूप से आदर करना चाहिए। धार्मिक, मत पटक विषयों को भूल जानेवाले इन दिनों में, इस प्रकार की आयोजना करना एक विशेषता है। अध्यापको को ऐसे धार्मिक विषयों को छात्रो को समझाने की आवश्यकता है।

श्री प्रसादजी ने अपने भाषण में बताया कि हिन्दू धर्म के प्रचार के लिए ऐसी पाठशालाओं की आवश्यकता के बारे में कहा तथा स्कूल और कालेज के अध्यापकों को प्रशिक्षण दें तो बहुत अच्छा होगा।

श्री एम. जे. केशवमूर्तिजी, व रजिस्ट्रार, श्री वेंकटेश्वर विश्व विद्यालय ने हिन्दू धर्म सग्रह पुस्तकों को बाँट दिया।

केरला में समाचार केन्द्र तथा कल्याण मण्डप के नूतन भवन :

दिनांक २-५-७९ को देवस्थान के कल्याण मण्डप तथा समाचार केन्द्र के भवन के लिए श्रीमति ज्योति वेंकटाचलम्, राज्यपाल, केरला ने नींव डाले। वहाँ पर सभी आध्यात्मिक तथा भक्ति परक कार्यक्रम चलाना चाहते हैं। इस का पूरा निर्माण वहाँ के स्थानीय तिरु-वेंकटाचलपति क्षेत्र समिति, गुरुवायूर के सहयोग से पूरा करेंगे।

मासिक राशिफल

जून १९७९ *डा० डी. अर्कसोमयाजी, तिरुपति.

मेष

(आश्विनी, भरणी, कृत्तिका केवल पाद-१)

राहु के द्वारा आदोलन। शनि के द्वारा झगडे, धन हानि या सतान से अलगाव। गुरु के द्वारा रिश्तेदारो से झगडे। कुज के द्वारा २७ तक आदोलन, बाद को नौकरी में या अस्वस्थता या घर में चोरी के कारण अशाति। शुक्र के द्वारा ६ तक प्रेम, बाद को धन, गौरव या खाद्य पदार्थ प्राप्ति या सतान-प्राप्ति। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में धनहानि, दूसरो को धोखा या नेत्रपीडा, बाद को धन, गौरव, उच्च पदवी-प्राप्ति। बुध के द्वारा ६ तक धन, अपमान, बाद को २२ तक धन हानि या बुरे प्रवर्तन के कारण भय, बाद को घर में वस्तुओ की समृद्धि।

वृषभ

(कृत्तिका पाद-२, ३, ४, रोहिणी, मृगशिरा पाद-१,२)

राहु के द्वारा झगडे। शनि के द्वारा धन हानि या मित्र हानि या रिश्तेदारो से अलगाव। गुरु के द्वारा निराशा। कुज के द्वारा धनहानि, पत्नी को असतोष, नेत्रपीडा। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में धन हानि या प्रयाण या उदर पीडा, बाद को दूसरो से धोखा या नेत्र पीडा या धनहानि। शुक्र ६ तक स्तब्ध, बाद को प्रेम। बुध के द्वारा ६ तक झगडे या बुरे सलाह के कारण धन हानि, २२ तक धन-प्राप्ति, अपमान या मित्रों की प्राप्ति, अपने बुरे प्रवर्तन के कारण भय।

मिथुन

(मृगशिरा पाद-३, ४, आर्द्रा, पुनर्वसु पाद-१,२,३)

राहु के द्वारा धन प्राप्ति। शनि के द्वारा गृहोपकरण, स्वस्थता या नूतन वस्त्र या वाहन प्राप्ति। गुरु के द्वारा धन, जय। कुज के द्वारा २७ तक सभी विषयो में विजय, बाद को धन हानि या पत्नी को असंतोष या नेत्र पीडा के कारण आदोलन। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में स्तब्ध, बाद को धन हानि, प्रयाण या उदर पीडा। शुक्र के द्वारा ६ तक मित्र प्राप्ति, धन, नूतन वस्त्र प्राप्ति बाद को स्तब्ध। बुध के द्वारा ६ तक शत्रु के कारण या अस्वस्थता या अपमान के कारण आदोलन, बाद को २२ तक झगडे या बुरे सलाह के कारण धनहानि, बाद को धन-प्राप्ति व अपमान।

कर्काटक

(पुनर्वसु पाद-४, पुष्य तथा आश्लेष)

राहु के द्वारा धन हानि। शनि के द्वारा धनाभाव। गुरु के द्वारा धन हानि या झगडे या अपमान। कुज के द्वारा अन्य ग्रहों के बुरे प्रभाव से मुक्ति, धन-प्राप्ति, जय। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में स्वस्थता, बाद को स्तब्ध। शुक्र के द्वारा ६ तक झगडे, अपमान, बाद को अच्छे मित्र, धन-प्राप्ति। बुध के द्वारा ६ तक धन व मित्र या प्रेम या वाहन प्राप्ति, २२ तक शत्रु वृद्धि, अपमान, बाद को झगडे या बुरे सलाह के कारण धन हानि।

सिंह

(उत्तर फल्गुनि पाद-१, मख, पूव फल्गुनि)

राहु के द्वारा आदोलन। शनि के द्वारा धन हानि या सतान से झगडे या रिश्तेदारों से अलगाव या बधु जनो का नष्ट। गुरु के द्वारा प्रयाण व प्रयास। कुज के द्वारा २७ तक अपमान, धन हानि, बाद को गृहोपकरण की प्राप्ति। रवि के द्वारा जय, गौरव, धन, स्वस्थता। शुक्र के द्वारा ६ तक सुख, धन, नूतन-वस्त्र प्राप्ति या पुण्य कार्य, बाद को झगडे या अपमान। बुध के द्वारा २२ तक जय, प्रेम, अच्छे मित्र, वाहन या सतान-प्राप्ति, बाद को शत्रु, अस्वस्थता व अपमान।
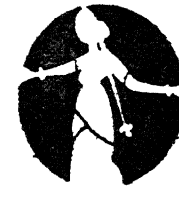
कन्या

(उत्तरा पाद-२,३,४, हस्त चित्त पाद-१, २)

राहु तथा शनि के द्वारा आदोलन। गुरु के द्वारा धन प्राप्ति। कुज के द्वारा धन हानि, अपमान। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में धन हानि, निराशा या अस्वस्थता, बाद को गौरव व विजय। शुक्र के द्वारा ६ तक नूतन-वस्त्र, प्रेम व घर, बाद को सुख, धन, व नूतन वस्त्र प्राप्ति व धार्मिक प्रवर्तन। बुध के द्वारा ६ तक निराशा, २२ तक धन, जय व प्रेम बाद को धन-प्राप्ति या अच्छे मित्र व वाहन प्राप्ति।

तुला

(चित्त पाद-३,४, स्वाति, विशाख पाद-१, २, ३.)

राहु के द्वारा सुख। शनि के द्वारा प्रेम व धन-प्राप्ति। गुरु के द्वारा धन हानि, अपमान।

कुज के द्वारा २७ तक पत्नी से झगडे या उदर पीडा या नेत्र पीडा, बाद को धन हानि व अपमान। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में पत्नी को असतोष या अस्वस्थता, बाद को धन हानि या निराशा या अस्वस्थता। शुक्र के द्वारा ६ तक स्त्री के कारण झगडे, बाद को धन प्राप्ति, नूतन वस्त्र, प्रेम व गृह प्राप्ति। बुध के द्वारा ६ तक धन, जय, नूतन वस्त्र या सतान प्राप्ति, २२ तक रुकावटें, बाद को लाभ प्रद, धन व जय।

वृश्चिक
(विशाख पाद-४, अनुराधा ज्येष्ठ)

राहु के द्वारा झगडे। शनि के द्वारा धन हानि या अपमान। गुरु के द्वारा लाभप्रद, धन व जय, खाद्यापदार्थ प्राप्ति व सतान प्राप्ति। कुज के द्वारा २७ तक धन, जय, बाद को पत्नी से झगडे, उदर-पीडा या नेत्र पीडा। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में प्रयाण या उदर पीडा, बाद को अस्वस्थता या पत्नी को असतोष। शुक्र के द्वारा ६ तक अस्वस्थता या अपमान। बाद को स्त्री के कारण आदोलन। बुध के द्वारा ६ तक जय, नौकरी में उन्नती, २२ तक झगडे, बाद को लाभप्रद, जय, नूतन वस्त्रप्राप्ति या धन या सतान-प्राप्ति।

धनु:
(मूल, पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ पाद-१.)

राहु के द्वारा पापकार्य। शनि के द्वारा अस्वस्थता या झगडे या अधर्म प्रवर्तन। गुरु के द्वारा अस्वस्थता या प्रयाण व प्रयास, नौकरी में झगडे। कुज के द्वारा २७ तक अस्वस्थता, शत्रुओ का डर, सतान के कारण आदोलन, बाद को स्वस्थता, धन प्राप्ति व विजय। शुक्र के द्वारा ६ तक रिस्तेदारो का आगमान, बडो की प्रशंसा, धन, मित्र या सतान प्राप्ति, बाद को अस्वस्थता व अपमान। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में स्वस्थता, जय, बाद को प्रयाण व उदर-पीडा। बुध के द्वारा ६ तक जय, नौकरी में उन्नति, २२ तक झगडे, बाद को लाभप्रद जय, धन, नूतन वस्त्र प्राप्ति व सतान प्राप्ति।

मकर
(उत्तराषाढ पाद-२, ३, ४. श्रवण, धनिष्ठ पाद-१, २)

राहु के द्वारा आदोलन। शनि के द्वारा पत्नी और संतान से अलगाव। गुरु के द्वार प्रेम, सुख। कुज के द्वारा २७ तक बुखार या उदर पीडा या बुरे मित्रो के कारण दुःख, बाद को अस्वस्थता या शत्रुओ का डर या सतान के कारण आदोलन। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में अस्वस्थता या शत्रुओ का डर, बाद को स्वस्थता व शत्रुओ पर विजय। शुक्र के द्वारा ६ तक अच्छे मित्र, रिश्तेदारो के आगमन या बडो की प्रशंसा, धन या सतान प्राप्ति। बुध के द्वारा ६ तक पत्नी तथा सतान से झगडे, बाद को लाभप्रद जब, उन्नति, बाद को झगडे।

कुंभ
(धनिष्ठ पाद-३, ४, शतभिष, पूर्वाभाद्रा पाद-१, २, ३.)

राहु के द्वारा झगडे। शनि के द्वारा प्रयाण। गुरु के द्वारा मानसिक अशाति। कुज के द्वारा २७ तक बुरे कार्यों से धन प्राप्ति व सतान से धन प्राप्ति, बाद को बुखार या उदर पीडा या बुरे मित्रो के कारण आदोलन। रवि के द्वारा अस्वस्थता या शत्रुओ का डर। शुक्र के द्वारा ६ तक गौरव, धन या नूतन वस्त्र या शत्रुओ पर विजय, बाद को अच्छे मित्र। बुध के द्वारा ६ तक घर में सुख व शाति, २२ तक पत्नी तथा सतान से झगडे, बाद को धन प्राप्ति व विजय।

मीन
(पूर्वाभाद्र पाद-४, उत्तराभाद्र, रेवती)

राहु के द्वारा धन प्राप्ति। शनि के द्वारा स्वस्थता, शत्रुओ पर विजय। गुरु के कारण धन, वाहन या सतान प्राप्ति या नूतन वस्त्र प्राप्ति। कुज के द्वारा २७ तक नौकरी में आदोलन, शत्रुओ का डर व झगडे या अस्वस्थता या घर मे चोरी, बाद को बुरे मार्गों से धन प्राप्ति व सतान से धन प्राप्ति। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में धन प्राप्ति व नौकरी में उन्नति, शत्रुओ पर विजय, बाद को अस्वस्थता। शुक्र के द्वारा धन, जय, गौरव, खाद्य-पदार्थ व सतान प्राप्ति या नूतन वस्त्र प्राप्ति। बुध के द्वारा ६ तक नये मित्र, बाद को बुरे प्रवर्तन के कारण डर, २२ तक घर में सुख व शाति, बाद को पत्नी तथा संतान से झगडे।

ग्राहकों से निवेदन

निम्नलिखित संख्यावाले ग्राहकों का चंदा ३०-७-७९ को खतम हो जायगा कृपया ग्राहक महोदय अपना चंदा रकम मनीआर्डर के द्वारा जल्दी ही भेज दें।

H 16 19 25 40 41 80 81 87 to 90 110 133

निम्नलिखित पते पर चंदा रकम भेजें :

संपादक,
ति. ति. देवस्थानम्,
तिरुपति.

EDITED AND PUBLISHED ON BEHALF OF THE T. T. DEVASTHANAMS BY K. SUBBA RAO, M.A. AND PRINTED AT T. T. D. Press, By M Vijayakumar Reddy, Manager, T T. D. Press, Tirupati.

मद्रास में दिनांक २९-४-७९ को रु० १० लाख की जायदाद से श्री वि वि आर रेड्डी धर्मशाला को ति. ति. देवस्थान को लांछन पूर्वक दिया गया।
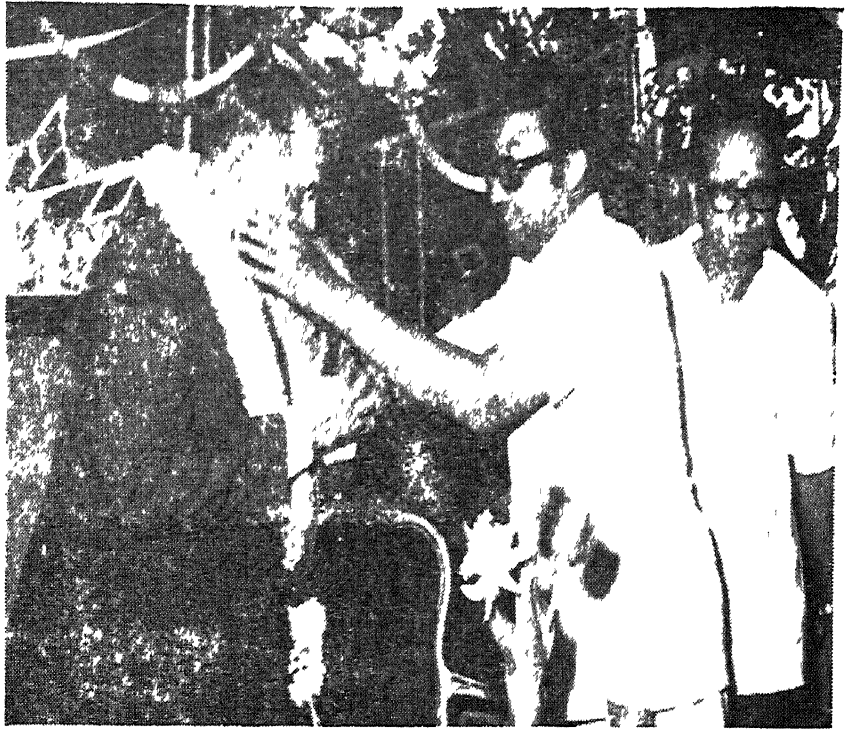
उस दिन के सभा के मुख्यातिथि तमिलनाड हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधिपति श्री टी रामप्रसाद राव है। पुष्पमालांकृत करते हुए कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी. वी आर के प्रसाद, आई. ए. एस, बाजू में न्यासमण्डल के अध्यक्ष डा० एन रमेशन, आई ए एस. को चित्र में देख सकते हैं।

श्री वि. वि. आर. रेड्डी धर्मशाला – मद्रास